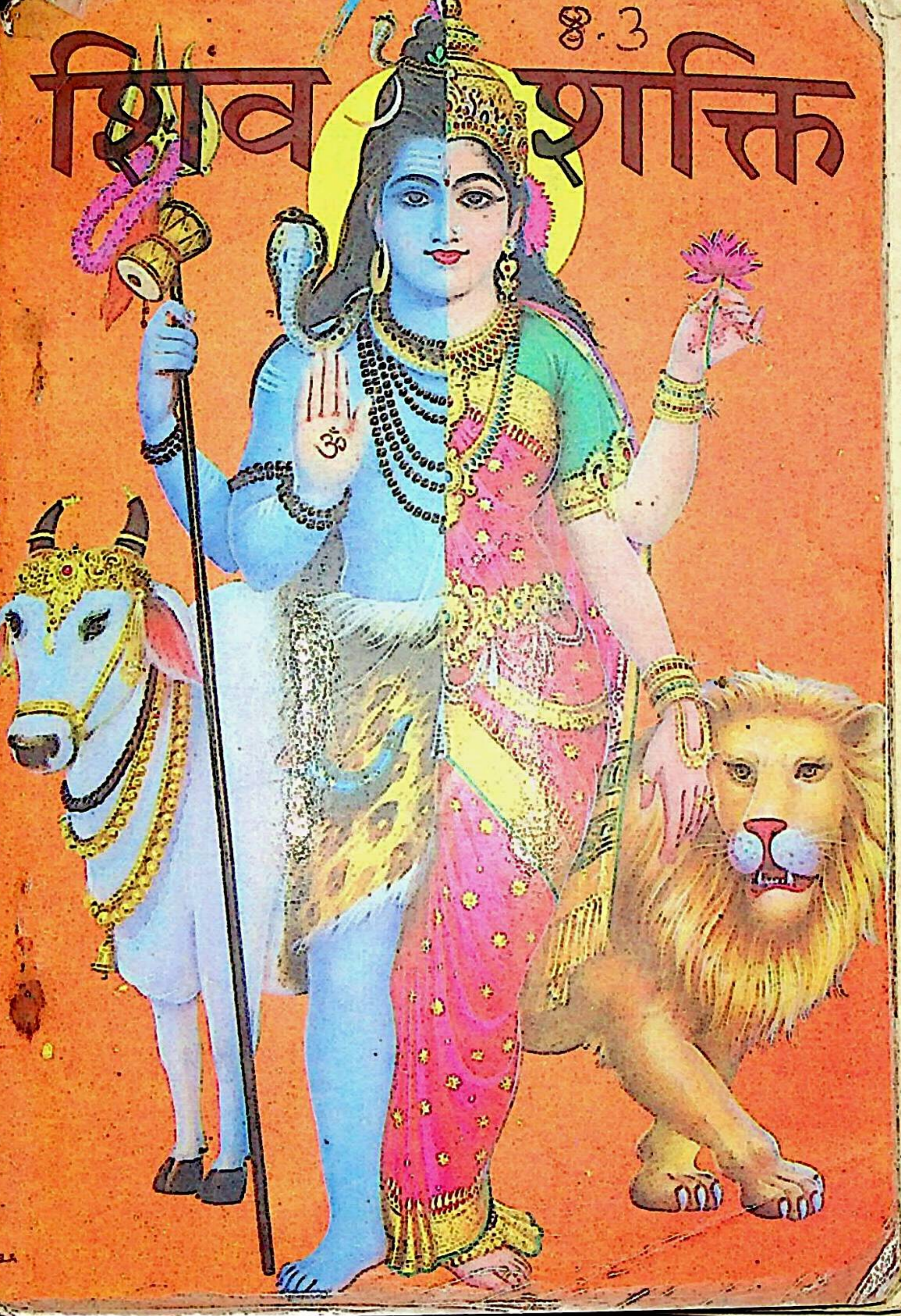
शिव शक्ति



शिव शक्ति

शिव शक्ति एक ही तत्व के दो महा-स्वरूप हैं। जिस भाँति चित्त के बिना चैतन्य नहीं हुआ जा सकता उसी भाँति शक्ति के बिना शिव को प्राप्त नहीं किया जा सकता, क्योंकि शक्ति ही शिव की इच्छायुक्त अभिव्यक्ति है।

'शिव' सृष्टि की लीला है तो इसकी क्रिया 'शक्ति' है। शिव को जानने के लिए शक्ति को पहचानना आवश्यक है। शक्ति ही यथार्थ में शिव 'तत्व' है और यही मूल तत्व शिव के अर्धनारीश्वर होने का रहस्य है।

इस पुस्तक में शिव शक्ति के रहस्यों को सरल रूप में प्रस्तुत करने के साथ-साथ शिवलिंग, प्रणव, और सृष्टिकर्ता के सार्वभौम गुणों का वर्णन करते हुए यह समझाया गया है कि मुख्यतः आद्य शक्ति का स्वरूप क्या है एवं उससे हमारा क्या सम्बन्ध है। वह सृष्टि का संचालन कैसे करती है और इस समस्त चराचर जगत की उसे आवश्यकता क्यों है।

शिव शक्ति

शिव शक्ति के तथ्य को प्रमाणित करने के लिए प्राचीन विचारधारा और मान्यताओं पर आधारित एक विवेचन।

लेखक—

श्री यशपाल जी

संस्थापक एवम् प्रवन्ध निर्देशक

तंज्योति गुह्य विद्या साधन एवम् अनुसन्धान केन्द्र

मूल्य—[redacted].००

30/

रणधीर बुक सेंल्स (प्रकाशन), हरिद्वार

□ प्रकाशक—

रणधीर बुक सेल्स (प्रकाशव)

१८२, श्रवणनाथ नगर, समीप हैप्पी स्कूल,
हरिद्वार-२४६४०१

प्रमुख विक्रेता—

१. पुस्तक संसार, बड़ा बाजार, हरिद्वार-२४६४०१
२. पुस्तक संसार, १६८-१६६, नुमायश का मैदान, जम्मू
३. गगन दीप पुस्तक भण्डार, एस० एन० नगर, हरिद्वार

□ प्रथम संस्करण—१६८६

□ मूल्य—

[redacted] रुपये मात्र

□ मुद्रक—

सुरेन्द्र प्रिंटर्स

४/१२३ बाजार गली, विश्वास नगर,
शाहदरा, दिल्ली-३२

भूमिका

'शिव-शक्ति' इस विषय पर कोई कितना भी कहे परन्तु वह कम ही रहेगा क्योंकि यह सर्वशक्तिमान परमात्मा की अभेदनीय माया है। यह माया ही सांसारिक दृष्टि भ्रम या मृगतृष्णा कहलाती है। इस माया का यह रहस्य है कि ये सारी सृष्टि में स्वयं समायी हुई है। शिव शक्ति की अभ्यर्थना में जो तत्त्व दृष्टिगोचर होता है वह अत्यधिक रहस्यमय है और सर्वसाधारण को इसका ज्ञान होना ही चाहिये।

सृष्टि के निर्माण कर्त्ता दो परम तत्व शिव और शक्ति के रूप में माने गये हैं। इनके विमुख रहने से या अलग रहने से कोई भी कार्य सम्पन्न नहीं होता। तथा सृष्टि का भी लालन-पालन नहीं हो पाता। जब ये दोनों विभिन्न रूप शिव+शक्ति=शिवशक्ति होकर परस्पर संयोग करते हैं तो शिव अर्द्ध नारीश्वर के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। शिव शक्ति एक दूसरे से उसी भाँति अभिन्न हैं जिस भाँति सूर्य से उसका

प्रकाश जब यह दोनों एक दूसरे के पूरक हैं तो शिव को पूजा जाय तब शक्ति स्वतः ही प्रसन्न हो जाती है और यदि शक्ति की पूजा की जाये तो शिव अर्चन स्वतः ही सम्पन्न हो जाता है। इन दो परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाले नामों की विषमता एवं विरोध का सामञ्जस्य ही उस परमतत्त्व परमात्मा के 'भगवान' कहलाये जाने का रहस्य है।

भगवान के रूप की तथा उसकी शक्ति की जो अनुभूति हम अपने हृदय में अनुभव करते हैं वह दो तरह की हुआ करती है। सौम्य तथा घोर।

सौम्य रूप में भगवान सृष्टि की रचना करते हैं और उसकी वृद्धि करते हैं तथा घोर रूप में अपनी ही रची हुई सृष्टि का संहार कर देते हैं।

शक्ति का स्वरूप आनन्द है जो शिव शक्ति के संयोग से होता है। यह आनन्द ही उमा या पार्वती है जो अपने स्वरूप का विकास पाती है शिव से मिलकर। जैसे छोटी-२ नहरें और नदियां अपना कोई महत्त्व नहीं रखा करतीं परन्तु जब यह प्रवाहित होते हुये किसी बड़ी नदी या समुद्र में जा मिलती हैं तो इनका स्वरूप विकसित होकर समुद्र के रूप को प्राप्त कर लिया करता है।

शिव का परिचय प्राप्त करने के लिये शक्तिको जानना अत्यधिक आवश्यक है क्योंकि शक्ति ही यथार्थ में शिव का रहस्य जानती है अन्य कोई भी नहीं।

शिव-शक्ति एक ही तत्त्व के दो महास्वरूप हैं। जिस भाँति से चित्त के बिना चैतन्य नहीं हुआ जा सकता उसी भाँति शक्ति के बिना शिव को प्राप्त नहीं किया जा सकता क्योंकि शक्ति ही शिव की इच्छायुक्त अभिव्यक्ति है। यह दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। चित्त के बिना चैतन्य नहीं और चैतन्य के बिना चित्त नहीं, इसी भाँति से शिव शक्ति परस्पर पूरक हैं। शिव सृष्टि की लीला है तो इस लीला की क्रिया 'शक्ति' है।

सत्यम् शिवम् सुन्दरम् के अनुसार शिव ही सत्य है। यह नाम सम्बोधन और रूप विशिष्ट शिव के सत्य होने के कारण ही सत्य प्रतीत होता है यद्यपि शिव के बिना अन्य सब असत्य है क्योंकि पूर्ण सत्य से हम साक्षात्कार कर ही नहीं सकते। सत्य को जानना तो यद्यपि बहुत दूर की बात है हम तो सूर्य की किरणों को भी नहीं जान सकते तथापि अनुभव

कर सकते हैं और अनुभव कभी भी पूर्णतः का माप-दण्ड नहीं हुआ करता। सूर्य की किरणें जब वातावरण में प्रसारित होती हैं तो उन्हें कोई भी नहीं देख पाता और यदि कुछ दिखलाई पड़ता है वह केवल प्रकाश ही होता है। जब हम किसी आधार पर अपनी परछाँई देखते हैं तब सूर्य की किरणों का अनुभव होता है। इसी भाँति सत्य है और सत्यम् शिवम् सुन्दरम् है।

प्रायः लोग पूछा करते हैं कि सृष्टि में माने जाने वाले तीन देवों में से सबसे बड़ा देव कौन सा है। इस उत्तर में सभी व्यक्ति अपनी-अपनी उपासना पद्धति के अनुसार अपने-अपने इष्ट को ही सर्वप्रथम बताते हैं। यह बात केवल बुद्धि भेद के कारण है क्योंकि उनमें न कोई छोटा है और न कोई बड़ा है। इनमें जब तक शक्ति है तब तक कार्य करते हैं अन्यथा व्यर्थ हो जाते हैं। यह तथ्य सर्वथा मान्य है कि कोई व्यक्ति जब तक कार्य का सम्पादन करता है तभी तक मुख्य है अन्यथा वह व्यर्थ जाता है। इसी भाँति से ब्रह्मा जब तक सृष्टि की रचना करते रहेंगे तभी तक ब्रह्मा रहेंगे क्योंकि ब्रह्मा का कार्य सृष्टि की रचना करने का है। विष्णु तभी तक विष्णु रहेंगे जब तक कि वह सृष्टि पालन करते रहेंगे इसी

भांति लीलामयी प्रभु शिव संहार करते रहने के कारण ही शिव रहेंगे परन्तु शिव तो कल्याणमयी शब्द है, मङ्गल का दाता है फिर यह संहार क्यों करेंगे ? इन्हें संहार करने की आवश्यकता क्यों है ?

शिव को संहार की आवश्यकता इसलिए है कि समस्त विश्व का इसी क्रिया के द्वारा कल्याण होता है। हमारे द्वारा किये गये शुभाशुभ कार्यों के कारण ही हमारा संहार आवश्यक हो जाता है क्योंकि हमें अपने अर्जित कर्मानुसार पुनः प्रजापति के निर्देश द्वारा सृष्टि में आना होता है।

सृष्टिचक्र को चलायमान रखने के लिये सर्वोत्तम उपाय है संहार और इस क्रिया को केवल शिव ही करते हैं। यदि शिव संहार न करें तो प्रजापति किसकी रचना करेंगे और यदि ब्रह्मा सृष्टि न करेंगे तो विष्णु किसकी पालना करेंगे। अतएव संहार सृष्टि के लिये कल्याणकारी कार्य है।

जब तक हमारी आवश्यकताएं सीमित न होंगी तब तक हम सोते जागते उनकी पूर्ति के उपाय में लगे रहेंगे। इसी कारण कभी भी सुख का अनुभव न कर पायेंगे। ऐसे में शिव संहार करके हमें सुख की

निद्रा में सुला देते हैं। हमें प्रत्यक्ष में शिव का यह कार्य अशोभनीय प्रतीत होता है परन्तु अप्रत्यक्ष में इसी कार्य के द्वारा हमारा और सृष्टि का कल्याण होता है।

आज यदि शिव से सम्बंधित विचार करने के लिये हम हिमालय से कन्याकुमारी तक और रामेश्वर से लेकर द्वारका तक देखते हैं तो शिवलिंग और शिवालयों की बहुलता दिखाई देगी। इस भाँति से यदि इस भारत को शिव प्रधान देख कह दें तो अतिशयोक्ति न होगी। शिवलिंग और शिवालयों के दर्शन हम विदेशों में भी कर सकते हैं।

फ्रांस के अनेकों स्थानों पर अब तक लिंग दृष्टिगोचर होते हैं। शिवलिंग विषय पर पाश्चात्य देशों में इतना प्रभाव था कि वहाँ लिङ्गार्चा नामक सम्प्रदाय भी पाया जाता था। अनेकों बार अनुसन्धान के परिणाम स्वरूप यह तथ्य उभर कर प्रकट हुआ है कि ख्रिष्टीय धर्म के प्रचार से पहले पाश्चात्य देशों में प्रायः किसी न किसी रूप में लिंग पूजा होती थी। रोम और यूनान में प्रियेपस तथा फल्लुक नाम से लिंग पूजा होती थी और ये दोनों राष्ट्रों के प्राचीनतम पूजा कर्म का प्रधान अंग था।

प्रत्येक जीव की इहलौकिक तथा पारलौकिक उन्नति का द्वार उसका धर्म है और प्रत्येक व्यक्ति को धर्म के विषयमें जानना चाहिए। मान्यता है कि स्तोत्रादि का पाठ करने पर यदि पाठक उसके अर्थ से और उनके भाव से अनभिज्ञ हैं तो उस पाठ के लाभ न्यून ही होते हैं। इसी भाँति धर्म का पालन करने वाला यदि अपने धर्म की सही रूपरेखा नहीं जानता तो उसका धर्माचरण न्यूनतम ही होता है। एक चींटी की भाँति एक चीनी का दाना मिल जाने पर प्रसन्न मत होइये कि आपको सभी कुछ मिल गया है बल्कि इस चीनी के दाने के उद्‌भव स्थल तक पहुँचिये जहाँ पर चीनी का एक दाना नहीं बल्कि चीनी का ढेर मिलेगा अतः अपने धार्मिक ज्ञान को बढ़ायें।

मैंने इस लघु पुस्तक में उस सर्वशक्तिमान परमात्मा का रहस्य समझाने का प्रयास किया है और मुझे आशा है कि यह कृति आपको अवश्य पसन्द आयेगी।

इस पुस्तक के लेखन में किसी भी धार्मिक मर्यादा को ठेस पहुँचाने का प्रयास नहीं किया गया है। यदि किसी के हृदय को किसी शब्द या उदाहरण के कारण ठेस पहुँचती है तो मुझे अल्पज्ञ जानकर क्षमा करें।

इस पुस्तक को केवल पुस्तक ही न मानें क्योंकि इसके लेखन के मध्य मुझे प्रत्येक शब्द के संयोजन और वाक्य विन्यास करने में प्रतिक्षण रोमाँच हो आया करता था। अनेकों बार मुझे विभिन्न अनुभूतियाँ हुई हैं। उनका वर्णन तो मैं यहाँ न कर सकूँगा लेकिन निवेदन करूँगा कि यह पुस्तक और इसकी संरचना प्रभु कृपा से ही सम्पन्न हो पाई है। मेरे जैसा अल्पज्ञ भला शिव शक्ति स्वरूप पर क्या लेखन कर सकता था। मेरा यह प्रयास यदि आपको आकर्षित कर सका, आपका ज्ञान-वर्द्धन कर सका और आप शिव शक्ति में विश्वास जाग्रत कर पायें तो मैं समझूँगा मेरी 'शिव शक्ति' रूपक पूजा अर्चना को स्वयं शिव और शक्ति ने स्वीकार किया है।

इसी आशा के साथ—

—यशपाल

संस्थापक एवं प्रवन्ध निर्देशक
तंज्योति गुह्य विद्या साधन एवं
अनुसन्धान केन्द्र
हरिद्वार (भारत)

सम्वत २०४२ वि०
हरिद्वार

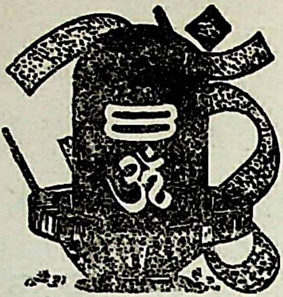
अनुक्रमणिका

समर्पण, लक्ष्य और कृति

सकल चराचर के नियन्ता सर्वशक्तिमान भगवान शिव के उस शक्तिकृत अर्धनारीश्वर स्वरूप की महाशक्ति को जिसकी कृपा-शक्ति से यह कृति आपके हाथों में है।

इसके मनन से शिवशक्ति आपको अपने आपमें शक्ति का आभास कराये और हम सब उस शक्ति में लीन होकर मोक्ष प्राप्त कर सकें।

—श्री यशपाल



"वाञ्छामि नाहमपि सर्वधनाधिपत्यं।
न स्वर्गभूमिमचलाँ न पदं विधातुः ॥
भूयो भवामि यदि जन्मनि नाथ नित्यं।
त्वत्पाद पंकजलसन्मकरन्द भृङ्गी ॥
किञ्जन्मवा सकल वर्ण जनोत्तमेन।
किं विद्यया सकल शास्त्र विचारवत्या ॥
यस्यास्ति चेतसि सदा परमेश भक्तिः।
कोऽन्यस्ततस्त्रिभुवने पुरुषोऽस्ति धन्यः ॥"

"हे भगवान् ! मैं न तो कुवेर का पदाभिलाषी हूँ और न ही स्वर्ग की अभिलाषा है। मुझे मोक्ष भी नहीं चाहिए। तुम्हारी कृपा स्वरूप इस सृष्टि में मेरा बारम्बार जन्म हो और प्रत्येक जन्म में मेरा हृदय तुम्हारे चरण कमलों में केन्द्रित रहे। उच्च कुल में जन्म लेकर क्या करूँगा। विद्यावान होकर शास्त्रादि का विचार करके क्या करूँगा ? जिसका ध्यान आपकी सेवा में लगा रहे उससे अधिक सौभाग्यशाली, विद्यावान, धनवान इस सारे त्रिभुवन में और कौन होगा।

—श्री यशपाल जी

शिव-शक्ति

अनादि शिव

देवाधिदेव महादेव को सम्बोधित किया जाने वाला शब्द 'शिव' नित्य, विज्ञानानन्द घन परमात्मा का ही एक सर्वश्रेष्ठ वाचक शब्द है। 'शिव' का उच्चारण अत्यधिक सरल, मधुर, मोहक तथा शान्ति का दाता है।

शिव ही जगत का कर्ता-धर्ता और सभी के द्वारा सम्बोधित किया जाने वाला ईश्वर जगदीश्वर सृष्टा और भगवान रूप है।

किसी भी तथ्य को प्रमाणित करने के लिए प्राचीन विचार धारा और मान्यता का अवलोकन करना होता है क्योंकि हम आज जो कुछ भी जानते हैं उसका आधार स्तम्भ व्यतीत हुआ कल होता है। वर्तमान काल में आज कहलाने वाला क्षण जब व्यय हो जाता है तो उसे भूतकाल कहते हैं। इस भूतकाल को बाँधकर रख पाना तो असम्भव है परन्तु यह शिक्षा

का ज्ञान मयी दान देने के लिये सदैव तत्पर रहता है। इसी व्यतीत हुये आज ने जो भूतकाल रूपी आवरण ओढ़ा तो हमें उन्नति का मार्ग दिखा दिया अतः शिव शक्ति विषयक वार्ता को प्रमाणित करने के लिये भी मुझे भूतकाल के उदाहरण प्रस्तुत करते हुए श्वेताश्वर की बात कहनी है—

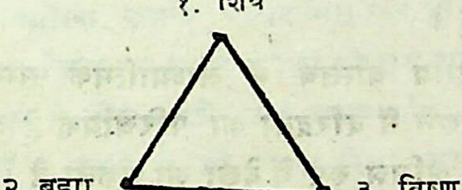
एको हि रुद्रा न द्वितीयाय।
तस्थुर्य इमाँल्लोकानीशत ईशनीभिः ।।१।।
प्रत्यङ् जनाँस्तिष्ठति सञ्चुकोचान्तकाले।
संसृज्य विश्वा भुवनानि गोपाः ।।२।।

एक ही रुद्र है जो कि सभी को अपने अधिकार में रखता है। चूंकि वह सभी को अपने अधिकार में रखता है तथापि उनका लालन, पालन तथा संहार कर्ता है अतः वही ईश्वर है। जगत में जिसे ईश्वर कहते हैं वह केवल रुद्र ही है।

रुद्र रूपी शक्ति सर्वप्रथम एक अकेली शक्ति थी। न धरा थी, न आसमान था, न वायु थी, न जल था, अर्थात् कुछ भी नहीं था तब एक दिवस सर्वशक्तिमान के हृदय में एक श्रेष्ठ विचार अंकुरित हुआ। चूंकि उसकी इच्छा मात्र से ही सभी क्रियायें क्रियान्वित होती हैं अतः उसकी इच्छा करते ही कि

'मैं एक हूँ अनेक हो जाऊँ' और वह अनेक हो गया। एक हुए वह, अर्थात् सर्वशक्तिमान प्रभु अन्तर्यामी भी परमात्मा और अनेक हुए, हम सब।

जब सर्वशक्तिमान परमात्मा सर्वप्रथम अनेक होता है तो अपना परिचय तीन रूपों में व्यक्त करता है जो कि ब्रह्मा, विष्णु और तीसरा स्वयं का ही रूप शिव होता है। यह प्रस्तुतिकरण एक त्रिकोणाकार आकृति के द्वारा व्यक्त होता है। यदि यह शून्य ही रहे तो अनेक नहीं हो सकता और यदि रेखा रहे तो शिखर नहीं हो सकता। दूसरे शब्दों में समझा जाये तो शून्य और रेखा अलग होकर रहें तो इनका परिचय नहीं होता जब यह समान मात्रा में विभक्त होते हैं तो त्रिभुजाकार हो जाते हैं। यथा–



स्वयं परमात्मा होने के कारण शिव स्वयं को केवल वैराग्य का सूचक बनाता है और आप समझ सकते हैं कि यही वह स्थति है जिसके कारण परम

तत्त्व की प्राप्ति सुलभ हो जाती है। ब्रह्मा ज्ञान का प्रतीक बन कर उभरते हैं तो विष्णु ऐश्वर्य का प्रतीक बन कर दृष्टिगोचर होते हैं।

आध्यात्मिक सम्पन्नता और शिव

जगत में उत्पत्ति के पश्चात् सभी जीव ऐश्वर्य की प्राप्ति हेतु संघर्षरत् रहते हैं। अर्थात् विष्णु को इस संघर्ष में विजय तभी मिलती है जब उसे ज्ञान होता है, बिना ज्ञानके वह कोई पदाधिकारी न बनकर साधारण मजदूर मात्र ही रह जाता है। ऐश्वर्य की प्राप्ति के पश्चात् जीव इसी में तन्मय हो जाता है और अन्तिम समय में जब इससे आत्मा विरोध कर उठती है तो वह वैराग्य की तरफ अग्रसर हो जाता है।

वैराग्य वास्तव में आध्यात्मिक सम्पन्नता है परन्तु देखने में दरिद्रता का परिचायक है और शिव को इसी अभिन्न रूप में देखा जा सकता है।

भोले भण्डारी बाबा शिव की प्राप्ति हेतु देवी पार्वती घोर तप करती हैं तो स्वयं शिव ही भेद परिवर्तन करके प्रस्तुत होते हैं और शिव निन्दा व्यक्त

करते हुए उन्हें समझाते हैं—"हे देवी ! आप राज कन्या हैं। आपके लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं है अतः शिव के साथ आपका पाणिग्रहण सर्वथा अनुचित होगा क्योंकि वह तो श्मशानवासी है। आप चन्दन का त्याग करके बबूल का चुनाव कर रही हैं। हाथियों की सवारी करती हैं लेकिन बैल वाले फकीर पर दिल लगाये हुये हैं। आप स्वयं के विषय में विचार कीजिये। कि कहाँ आपका कुसुम सुकुमार शरीर तथा सारे ब्रह्माण्ड में न सुलभ हो पाने वाली सुन्दरता और कहाँ वह जटाधारी चिता की राख को देह में लेप करने वाला त्रिनेत्री जो सदा श्मशान में रहता है। संसारी तो क्या देवता गण भी उसे भूताध्यक्ष कहते हैं क्योंकि उसके पार्षद भूत प्रेत ही हैं। तुम जब प्रातः निद्रा का त्याग करती हो तब सुन्दर वाद्य यन्त्र बजते हैं और उसके यहाँ डमरू और सिंगी ही बजते हैं। उसके न तो माता पिता का परिचय है और न ही उसके गोत्र का। स्थिति इतनी विकट है कि रहने को मकान नहीं और पहनने ओढ़ने को कोई वस्त्र और उसका विधान नहीं। अनपढ़ हैं वैरागी हैं, गले में मुण्डमाला पहनते हैं, सिर में जटायें हैं और हाथ पाँव में ही नहीं बल्कि कण्ठ में भी नागों

को धारण करते हैं। अतः आप उनसे विवाह का विचार त्याग दें और कहीं अन्य मन को रमायें।"

शिव तत्त्वैकनिष्ठ पार्वती शिव सम्मान में यह कटु आलोचना श्रवण करके कुपित होकर कहती हैं—"मुझे तुम्हारी वार्ता अप्रिय प्रतीत होती है। इससे अन्य और मेरे भावी स्वामी का उपहास मत करना। मुझे प्रतीत होता है कि तुम शिव विषयक कुछ भी ज्ञान नहीं रखते हो। यही कारण तुम्हारे मिथ्या सम्भाषण का है। शिव क्या है? यह तुम क्या जानो। तुम्हारे ज्ञान वर्द्धनार्थ वर्णित करती हूँ, तुम श्रवण करो। जो सबके आदि और अन्त हैं उसकी जाति और गोत्र क्या होंगे। वह तो अनादि, अनन्त, नित्य, निर्विकार, अज, अविनाशी, सर्वशक्तिमान, सर्वगुणाधार, सर्वज्ञ, सर्वोपरि तथा सनातन देव हैं। जिन वेदों से तुम विद्या प्राप्त करते हो, वह तो शिव के निःश्वास हैं। वह अपने भोलेपन में सभी को सभी कुछ देकर यदि अपने प्रति उदासीन रहते हैं तो यह उनकी श्रेष्ठता है। उनका नाम शिव है क्योंकि वह मंगलमय हैं।"

प्रत्येक जीव आकर्षित होता है आकर्षण से और आकर्षण होता है सुख, समृद्धि और सम्पन्नता

में। ऐसा कोई भी जीव नहीं है जो इसे प्राप्त नहीं करना चाहता। वस्तुतः यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रत्येक जीव को दो में से एक की प्राप्ति तो होती ही है जिसे कि गरीबी या अमीरी कहते हैं। दरिद्रता अर्थात् शिव, सम्पन्नता अर्थात् विष्णु और इसे समझने की शक्ति प्राप्त होती है ज्ञान अर्थात् ब्रह्मा से। दूसरे शब्दों में व्यक्त किया जाये तो जिसका जैसा ब्रह्मा अर्थात् ज्ञान होता है उसका वैसा ही शिव (दरिद्रता, वैराग्य) और विष्णु (सम्पन्नता ऐश्वर्य) होता है। यह बात और है कि किसी को पहले दारिद्रय की प्राप्ति होती है तो किसी को सम्पन्नता को। वह सौभाग्यशाली विरले ही हुआ करते हैं जिन्हें सर्वप्रथम ज्ञान की प्राप्ति होती है जिसके सहारे शीघ्र ही वह दरिद्रता और सम्पन्नता में व्याप्त भेद समझ लेता है। कोई भी ज्ञानवान दरिद्रता या सम्पन्नता के प्रति ललक नहीं रखा करता क्योंकि यह चिर स्थायी नहीं होती परन्तु दरिद्रता में प्रभु रूपी ऐश्वर्य यदि प्राप्त हो जाये तो उसे कोई छीन या लूट नहीं सकता।

इस प्रकार से ब्रह्मा (ज्ञान) की श्रेष्ठता प्रकट होती है परन्तु यह तथ्य यदि याद रखा जाये कि

सर्वशक्तिमान प्रभु अपनी इच्छा से अनेक हुआ तो शिव ही ब्रह्मा तथा विष्णु हुआ था। इससे पहले तो वह स्वयं जब एक था तब केवल रुद्र (शिव) था। अतः शिव ही सर्वशक्तिमान, सर्व सुखों समृद्धियों की मन्दाकिनी का उद्भव स्थल प्रमाणित होता है।

जगत के सृष्टिकर्ता परम प्रभु का नाम शिव है। जब शिव के रहस्य या तत्व पर मंथन करते हैं तो यह कल्याणमयी शब्द दो पदार्थों का रहस्य स्पष्ट प्रकट करता है और इसी क्रिया के परिणाम स्वरूप यही शिव से शिव तर हो जाता है और ऋषिगण प्रशंसा के शब्दों में कह उठते हैं—

ॐ नमः शम्भवाय च मयाभवाय च।
नमेः शङ्कराये च मयस्कराय च।
नमेः शिवाये चं शिवतराय च॥

कर्मफल का भोग भोगने के लिये सृष्टि का संचालन होता है। इस सृष्टि चक्र में प्रवेश ले लेने के पश्चात् जीव विभिन्न भांति के दुःखों का सामना करता है। इस संघर्ष को करते हुए भी जो जीव परम तत्त्व से मुँह नहीं मोड़ता अर्थात उसका ध्यानादि करता रहता है तो उस समय जब कर्मफल का पूर्ण दुःख प्राप्त कर लेने के पश्चात् जीव को सृष्टि चक्र

से छुटकारा प्राप्त होता है तो वह ईश्वर उसे श्रेष्ठ पद प्रदान करता है।

मानव और कल्याणमयी शिव

स्वर्णकार की भट्ठी में तपते हुए और पिघलते हुये स्वर्ण को भट्ठी की तपिश से बड़ी असुविधा होती है और वह बारम्बार पिघल कर फैल जाता है और अपना आक्रोश व्यक्त करता है परन्तु वह इस बात को नहीं जानता कि जब तक वह साँचे में नहीं ढलेगा उसे किसी के हाथ या गर्दन पर शोभायमान होने का अधिकार प्राप्त नहीं होगा। इसी बात को अन्य शब्दों में समीक्षात्मक दृष्टिकोण से कहा जाये तो स्वर्ण का सबसे प्यारा साथी स्वर्णकार होता है जो कि उसे सम्मानदायक कोई रूप प्रदान करता है। ठीक इसी भाँति से जीवन के कर्म पथ में वह प्यारा प्रभु हमें एक रूप देना चाहता है जिससे कि हम सम्मान प्राप्त करते हुए श्रेष्ठपद को प्राप्त हो सकें। और यह श्रेष्ठ पद तो मृत्युपरान्त ही प्राप्त हुआ करता है।

हमें इस सृष्टि चक्र से संहार के समय ही छुट-

कारा प्राप्त होता है, जब वह एक माँ की भाँति उपस्थित होकर हमें चिरनिद्रा में सुला देता है चूँकि वह हमें अन्त समय में आकर सुला देता है। अतः अनेकों ऋषिगणों ने इसी कारण उसे शिव कहा। संहार के समय इसके अतिरिक्त अन्य कोई भी वर्तमान नहीं रहता और इसी कारण समूचा ब्रह्माण्ड श्मशान हो जाता है। प्रत्येक संहार के पश्चात सार रूप में यदि कुछ शेष बचता है तो वह होती है राख और शेष होते हैं मुण्ड। इन्हीं मुण्डों की वह माला धारण कर लेते हैं और इसी राख को वह अपनी देह पर लेप लेते हैं। इस भाव में कितनी तड़प है यह वर्णन करने की नहीं, केवल अनुभव करने की बात है।

आज जगत में जब किसी का कोई प्रिय मृत्यु को प्राप्त हो जाता है तो उस प्रिय के निकट सम्बंधी रोते बिलखते हैं यह हमारे साँसारिक सम्बंधी होते हैं और शिव हमारा आध्यात्मिक सम्बन्धी होता है क्योंकि वह हमसे अभिन्न नहीं है। वही तो अकेला था और उसी की इच्छा हुई कि मैं अनेक हो जाऊँ और अनेक हो गया। अब प्रलय काल में जब उसके अनेक रूपों में से कोई देहधारी रूप ध्वस्त हो जाता

है तो वह दयार्द्र होकर उसकी राख को अपनी देह पर लगा लेता है। शिव को तभी तो चिता की भस्म लेपी और रुण्ड-मुण्ड मालाधारी कहते हैं।

शिव के साथ हमारा सम्बन्ध और उसका श्मशानवासी कहलाना कोई हँसने हँसाने की बात नहीं बल्कि एक स्पष्ट करुणा है और जिसे इस करुणा का ज्ञान नहीं है वही जीव तो इस कार्य को तमोगुणी कार्य कहेगा।

कर्पूर गौर शिव की इच्छा में कोई भी विघ्न उपस्थित नहीं कर सकता। यह तो अपनी इच्छा से उत्पन्न करते हैं, अपनी इच्छा से पालन करते हैं और अपनी ही इच्छा से संहार को तत्पर हो जाते हैं।

हिमाच्छादित कैलाश पर्वत के उत्तुङ्ग शिखर के ऊपर हिम पुत्री देवी पार्वती के साथ देवाधिदेव महादेव सदा आनन्दमग्न होकर समाधिस्थ हैं। भू-मण्डल में चाहे कितना भी कोहराम मच जाये, ब्रह्माण्ड के रचनाकारक ब्रह्मा सृष्टि की रचना करते-करते चाहे शिथिल हो जाये, चाहे शेषनाग की शैय्या पर विराजमान विष्णु सृष्टि को पालना करते हुये क्लांत हो जायें पर महामृत्युञ्जय महाराज अपनी समाधि में ही निमग्न रहते हैं। एक शब्द है सगुण

अर्थात् मायासंचलित ब्रह्म जिनकी संज्ञा पुरुषवाची है। शिवजी की अपनी अलौकिक इच्छा से ही क्षोभ के कारण स्वरूप ब्रह्मा, सत्त्व के कारण स्वरूप विष्णु और तम के कारण स्वरूप रुद्र में प्रकट होते हैं। स्वयं ही कर्ता धर्ता होते हुए भी शिव उदासीन भाव प्रकट करते हुये सदा तप में लीन रहते हैं जबकि इस सारी सृष्टि के ही नहीं अपितु पूरे ब्रह्माण्ड के त्रिदेव कोई और नहीं स्वयं शिव हैं। संहार के पश्चात् सृष्टि का पुनः जन्म करने के लिये जब परब्रह्म सृष्टियुन्मुख होते हैं तो वह परात्पर सदाशिव कहलाते हैं।

विभिन्न रूपों में शिव

महाप्रभु शिव अपनी ही इच्छा शक्ति के द्वारा सृष्टि की रचना करते हैं इस सृष्टि कार्य में शिव की अपनी अन्तरिम शक्ति दो विभिन्न रूपों में व्यक्त होती है, जिसमें से एक मूल प्रकृति तथा दूसरी दैवीय प्रकृति है। सनत्कुमार संहितानुसार शिव की अनेकों मूर्तियाँ हैं, जिसमें से प्रथम मूर्ति क्रीड़ा करती है, दूसरी मूर्ति तपस्या करती है, तीसरी मूर्ति संहार करती है, चौथी मूर्ति सृष्टि करती हैं,पाँचवी मूर्ति ज्ञान

प्रदान करती है। इन्हीं गुणों के कारण शिव को ईशान भी कहा जाता है और शिव की मूर्ति को ईशान मूर्ति कहते हैं क्योंकि शिव ही सभी कुछ हैं और सभी कुछ करने में समर्थ हैं।

चराचर विभूतियाँ और शिव

शिव ही केवल परम तत्त्व है तथा सभी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कारणों का ज्वलंत कारण है। इसी की कृपा से भगवान भास्कर नित्य प्रति जीवन दायिनी किरणों का समर्पण करते हैं। चारु चन्द्रमा की घटती बढ़ती कला के द्वारा भगवान शिव एक वैज्ञानिक तथ्य प्रस्तुत करते हैं। वायु निरन्तर गतिशील है तो इनके भय से ही। ऋतुयें यथावत आर्विभूत होती हैं। प्रकृति अपनी मनमानी छटा प्रस्तुत करती है। मेघ मण्डल तथा इसमें विद्युत की चपलता युक्त भरा हुआ अदर्शित जल शिव की माया का विलास ही तो हैं। कभी वह पौधों को पुष्पमयी कर देता है तो कभी पत्ते भी नहीं रहते। कभी शीत की लहरें, कभी लू की लपटें तथा कभी शिशिर का सीत्कार। वसन्त के बाद ग्रीष्म का आर्विभाव, इसके बाद नयना-

भिराम वर्षा और एक क्रम से बंधा हुआ समूचा सृष्टि संचालन किसी संचालक के बिना सम्भव नहीं है। यह सारा दृष्टिगोचर होने वाला चराचर एक नियम से बंधा सर्वदा अनुशासन प्रिय है। यह सब एक उसी प्रभु की माया पाश से युक्त अठखेली मात्र है जो कि सबका अधिपति है, सबका रचयिता है, सबका पालक है एवं सबका संहर्त्ता है। जिसे सभी सोचते हैं और जब कोई उपाय प्रभावी नहीं होता तो जिसके ऊपर सभी कुछ शेष छोड़ दिया जाता है उसके अनन्त नाम हैं और अपरिमित विभूतियाँ हैं। कोई उसे शिव कहता है तो कोई उसे महादेव कहता है। ब्रह्म, नारायण, पुरुष, कर्त्ता, कर्म अर्हन जैसे नामों से लोग किसे पुकारते हैं, किसकी पूजा अर्चना करते हैं ? क्या यह वही नहीं हैं जिसे कि विभिन्न नामों से सृष्टि में याद किया जाता है ? इसमें तो सन्देह का प्रश्न ही प्रस्तुत नहीं होता कि यह सभी विभिन्न नाम रूपी सम्बोधन केवल एक परात्पर नाम से सम्बन्धित हैं। कोई भी नदी, कोई भी नाला कहीं से भी प्रारम्भ होकर पूर्व मार्गी हो या पश्चिम मार्गी हो, बहते हुये अन्त समय पर समुद्र में जा मिलता है। इसी भाँति यह सभी सम्बोधन कहीं से भी प्रारम्भ हो अन्त समय

पर शिव में जाकर लीन हो जाते हैं। परात्पर सच्चिदानन्द शिव केवल एक ही है और वही विश्वातीत है, विश्वमय भी है। शिव एक ही है और अनेकों रूपों में व्याप्त हुआ है। यह कभी भी विचार नहीं करना चाहिये कि परात्पर महाशिव के अलावा दृष्टिगोचर होने वाले भिन्न-भिन्न स्वरूप काल्पनिक हैं। चूंकि शिव के ही यह स्वरूप हैं और शिव को भगवान कहते हैं अतः यह सभी विभिन्न स्वरूप भगवान के ही हैं। इसमें सन्देह नहीं रखना चाहिये। क्षुधा पूर्ति हेतु जिस भाँति हमें एक रसोई की आवश्यकता होती है उसी भाँति हमें सृष्टि में एक भगवान की आवश्यकता होती है रसोई का सुचारु रूप से संचालन स्त्री ही कर सकती है इसी भाँति दुर्लभ मोक्ष की प्राप्ति केवल परात्पर शिव से होती है क्योंकि किसी को कुछ देने के लिए उन्हें किसी से पूछना नहीं पड़ता। शिव स्वभावतः ही भोले भण्डारी हैं अतः जिसे जो चाहा, जब चाहा, दे दिया।

पिता और सूर्य की भाँति-शिव

कुछ विचारकों ने यह विचार स्थापित किया कि भगवान शिव का स्वरूप केवल कोरी कल्पना

मात्र है। इनका एकमुखी होना, पञ्चमुखी होना, नागयज्ञोपवीत धारण करना, अमृतमयी कहलाना, नीलकण्ठ बनना मदन का दाह करना, वृषभ सवारी आदि सभी काल्पनिक तथ्य हैं परन्तु वह सभी यह नहीं जानते कि सूर्य, सूर्य ही रहता है उसे काल्पनिक कहें या अकाल्पनिक। अपने घर के तथा मन मन्दिर के दरवाजे दृढ़ता से बन्द कर लेने पर भी सूर्य का प्रकाश भीतर पहुँचता ही है। सन्तान कैसी भी नालायक निकल जाये पिता उससे प्यार करता ही है क्योंकि वह पिता है। रात्रिचर पक्षी उल्लू को सूर्य नहीं दीखता, इसमें सूर्य का तो कोई भी दोष नहीं है। इसी भाँति हम भगवान को मानें या न मानें भगवान का प्राकट्य तो समाप्त होगा नहीं बल्कि एक नालायक सन्तान मान कर एक पिता की भाँति हमारा भी पालन वह करता ही रहेगा और अन्त समय इसे भी मृत्यु की गोद में चिरनिद्रा के रूप में सुला देगा। उसकी क्रिया सभीके हेतु एक समान है। वह जब सृष्टि करता है तो दोष युक्त चरित्र भी प्रस्तुत करता है और जब संहार करता है तो अपने भक्तों को भी नहीं छोड़ता क्योंकि उसका कार्य ही सृष्टि उत्पन्न करना, पालन करना और संहार करना है। कैलाश पर्वत के

हिमाच्छादित उत्तङ्ग शिखर पर वह सर्वदा समाधिस्थ होकर किस की स्तुति करते हैं ? कोई कहता है। 'अमुक' की और कोई कहता है 'अमुक' की। परन्तु ऐसा नहीं है।

सदैव जाग्रत-शिव

समुद्र मन्थन से प्राप्त होने वाले विष को जब पीते हैं तो कण्ठ में ही रोक लेते हैं क्योंकि उन्हें संसार रूपी जीवों की करुणा सदैव याद रहती है। शिव का पेट यह, मृत्युलोक माना जाता है। यदि वह विष पी जाते तो यह मृत्युलोक ही समाप्त हो जाता। इसी कारण वह उस विष को कण्ठ में रोक करके नीलकण्ठ कहलाते हैं। श्री सदाशिव सदा ध्यानमग्न होकर अन्तर्धान रहते हुये केवल सृष्टि पर केन्द्रित होते हैं क्योंकि जो कुछ भी करना है उन्होंने ही तो,करना है। जगत में प्रसिद्ध सृष्टि कर्त्ता ब्रह्मा भी सो जाते हैं और पालन कर्त्ता विष्णु शेषनाग की शय्या पर ऐश्वर्य का सुख भोग करते हुये सोते रहते हैं। केवल एक परात्पर सच्चिदानन्द परमेश्वर शिव सदा जागते रहते हैं क्योंकि वह जानते

हैं कि यदि वह सो गये तो जगत मृत हो जायेगा।

भगवान शिव अपने विस्तार रहित अद्वितीय स्वरूप में सदा स्थित रहते हैं और जगत में असंख्य रूपों के द्वारा दृष्टिगोचर होने वाली प्रकृति देवी सदा उनमें विलीन रहती है। यही रहस्य तो शक्ति का शक्तिमान में अक्रिय तथा अव्यक्त स्थिति का है।

शक्ति है परन्तु दृष्टिगोचर नहीं होती क्योंकि वह वाह्य क्रिया रहित है।

प्रणव और शिव

शिव प्रणव स्वरूप है।

प्रणव के सिर पर चन्द्र बिन्दु की स्थिति होने के कारण प्रणव चन्द्रशेखर है। शिव को इसी कारण चन्द्रशेखर कहते हैं।

प्रणव वेदों का सर्वोपरि बीज मन्त्र है जिसे कि सर्वसाधारण और विशेष जनों के मध्य 'ॐ' के रूप में जाना जाता है।

निर्विकार, निराकार, सच्चिदानन्द, परब्रह्म श्री परमात्मा का वैदिक नाम शिव है। यह मान्यता है

कि वेद ईश्वर के द्वारा कहे गए थे अतः शिव उपासना या शिव महानता कोई साम्प्रदायिक बात नहीं है। वेद और विद्या दोनों शब्द 'विद' धातु से बने हैं जिसका अर्थ होता है जानना अर्थात ज्ञान ।

भगवान शंकर के अनेकों नाम हैं जो कि विभिन्न स्थलों पर स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं। इनमें से कोई भी नाम निरर्थक, अर्थहीन या प्रभावहीन नहीं हैं। सम्भवतः यही कारण है कि अल्प आयु के समापन पर मार्कण्डेय ऋषि 'ॐ रुद्रं पशुपतिं स्थाणुं नीलकण्ठ-मुपापतिम्' कह कर आर्त्तनाद कर उठते हैं।

अनेकों साधक और शिव को सम्बोधन करने के अनेकों नाम इन्हें अलग नहीं करते। प्राचीन समय में पुत्र अपने पिता को 'पिता श्री' कह कर सम्बोधित करते थे। इसके बाद पिता 'पिता जी शब्द से सम्बोधन होता रहा। धीरे धीरे यह सम्बोधन 'पापा' बना और आज आधुनिकता के समय 'डैडी' कहा जाता है परम पूज्य पिता श्री को। यहाँ तक कि अब कहीं पर प्रातः वन्दनीय पिता श्री को 'डैड़ी' नहीं 'डैड' कहते हैं। डैड अर्थात मरा हुआ। इसके प्रभाव स्वरूप पिता मर तो नहीं जाता और न ही उनके सम्बन्ध बिगड़ ज़ाते हैं। इसी भाँति से परम-

पूज्य जगत का पिता शिव कभी भी निराश नहीं करता उसे चाहे जिस नाम से भी पुकारा जाये। शिव को सम्बोधित किये जाने वाले नामों को समझा जाये तो शिव की भाँति ही उसके सभी नाम पूर्णता रखते हैं।

जगत में प्रचलित ॐ अपने आपमें तीन शक्तिमय शब्दों का संयोजन रखता है। इसमें आने वाले शब्द अ, उ तथा म है। यह तीनों शब्द स्वयं में ही एक विशेषता रखते हैं जो कि निम्नलिखित है —

अ शब्द सृष्टि का द्योतक है।

उ शब्द पालन का द्योतक है।

म् शब्द संहार का द्योतक हैं।

इन तीन शब्द रूपी शक्तियों का पुञ्ज ही प्रणव के रूप में साकार होता है। इसी तीन शब्दात्मक शक्तियों के कारण उसे त्रिगुण वा गुणत्रयी भी कहते हैं।

त्रिगुण का सम्बन्ध प्रायः ब्रह्मा, विष्णु और महेश लगाया जाता है। कुछ विद्वगण अधिक ज्ञानी हो जाने के कारण उसके तीन नेत्रों वाले स्वरूपवश ही उसे त्रिनेत्री या त्रिगुणाकार कहते हैं। वस्तुस्थिति जो भी हो यह दृष्टिगोचर होने वाले प्रधान तीनों देव वस्तुतः

एक ही हैं या एक ही केन्द्र बिन्दु की तरफ संकेत करते हैं।

ॐकार शक्ति सम्पन्न बीज मंत्र में उपरोक्त तीन शब्दों के साथ ही नाद, बिंदु, कला और कलातीत स्पष्ट दर्शित होते हैं।

सच्चिदानंद परब्रह्म अपनी शक्ति से सर्वप्रथम नाद को उत्पन्न करते हैं। यही नाद अहंकार को जागृत करता है। 'मैं मनुष्य हूँ' ऐसा जानना एक सत्यता है परंतु 'मैं' शब्द के कारण यह अहंकार का बोधन है। 'मैं' शब्द कभी भी चिरंजीवी नहीं किया करता। बकरी प्रायः मैं का ही उच्चारण करती है अतः वह छोटी हो या बड़ी प्रायः काट कर बिक्री कर दी जाया करती है।

नाद के पश्चात् बिंदु का आगमन होता है। इस बिंदु में तीनों गुण समान मात्रा में रहते हैं जिसे कि सत्व, राजस, तामस कहते हैं। चूँकि यह तीनों विशेषतायें बिंदु के साथ प्रस्तुत होती हैं अतः यह उत्पत्ति में सहायक होता है। सम्भवतः यही कारण है कि रंगयुक्त होकर यह बिंदु कर्म-काण्ड करने वाले की तथा सती साध्वी सुहागिन के माथे की शोभा बनता है। एक रेखा एक ही रहती है उसके साथ बिंदु का

संयोजन उसे दस, सौ, हजार जैसे महत्वपूर्ण पद प्रदान करता है। माथे में शून्याकार बिंदी स्त्री को विवाहित प्रमाणित करती है। दूसरे शब्दों में कहा जाये तो इन्हीं तीनों विशेषताओं के सङ्गम पुन्ज को परमात्मा कहा जाता है। ब्रह्मा को सृष्टि का कर्ता, बिष्णु को सृष्टि का पालक एवं शिव को संहारक कहा जाता है। विद्वजनों ने यही विशेषतायें इन त्रिदेवों की व्यक्त की हैं।

साधक और शिव

परब्रह्म परमात्मा भी स्वयं को अदृश्य न रखते हुए कुछ ऐसी लीलायें करता है कि लोगों का ध्यान उससे हट जाये।

एक बार ही नहीं अनेकों बार मेरे अनुभव में आया है कि कोई व्यक्ति आया और उसने दीक्षा के द्वारा उपासना कर्म पर दृढ़ होकर चलने की वार्ता की। शिव के नाम पर वह यही कहते हैं कि 'औढरदानी' शिव शीघ्र जगते ही नहीं। सदा तप में लीन रहते हैं इसी कारण उसके साधक प्रायः निर्धनतापूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं।

शिव का इस रूप में प्रस्तुत होना ही उसके ईश्वरीय प्रमाण का सूचक है। कहावत है प्रभु की भक्ति जीवन में दुःख का कारण होती है। अन्य व्यक्ति दुःखी होता ही है परन्तु साधक को अधिक दुःख भोग करने होते हैं। इसीलिए ध्रुव एक टांग पर एकाग्रचित्त होकर हिंसक वनप्रांत में अकेला खड़ा रहता है। सम्भवतः इसीलिए तो प्रहलाद को पागल हाथी के समक्ष डाल दिया जाता है या पर्वत से गिरा दिया जाता है।

यह सब बातें साधकों को भयभीत करने के लिए हुआ करती हैं जिससे कि वह वास्तविक मार्ग से हट जाये और अगर साधक नहीं हटता तो पर्वत के ऊपर से गिराये जाने पर नीचे स्वयं प्रभु खड़े होकर अपनी गोद में ग्रहण कर लेते हैं। इसी तथ्य पर मन्थन किया जाये तो शिव का रहस्य साक्षात् जीवंत हो उठता है।

सप्तमुखी शिव

शिव को अनेकों मुखी के रूप से जाना माना जाता है जिसमें से सप्तमुखी रूप ईश्वर रूपी शिव को समझने में पूर्ण सहाय्य होता है।

शिव का प्रथम मुख 'अ' है जिसे कि 'तत्पुरुष' कहते हैं। सम्भवतः इसी कारण 'ॐ तत्पुरुषाय नमः' कहा जाता है।

शिव का द्वितीय मुख 'उ' है जिसे कि 'अघोर' कहते हैं। सम्भवतः इसी कारण 'ॐ अघोरायै नमः' कहा जाता है।

शिव का तृतीय मुख 'म' है जिसे कि 'सद्योजात' कहते हैं। इसी कारण ही उसे 'ॐ सद्योजातयै नमः' से प्रणाम करते हैं।

शिव का चतुर्थ मुख बिंदु स्वरूप है, जिसे कि 'वामदेव' कहते हैं। सम्भवतः इसी कारण 'ॐ वाम-देवायै नमः' कहते हैं।

शिव का पंचम मुख बिंदु स्वरूपी है जिसे कि 'ईश्वर' कहते हैं। छठा मुख 'कला' कहलाता है, जिसे कि 'नील कण्ठ' कहा जाता है। सप्तम् मुख कलातीत अव्यक्त है। इसे निम्नलिखित रूप में भी स्वीकार किया जाता है।

प्रथम मुख ब्रह्मा है।
द्वितीय मुख विष्णु है।
तृतीय मुख शिव है।
चतुर्थ मुख ईश्वर हैं।

पंचम मुख महेश्वर है ।

षष्ठं मुख परशिव है ।

सप्तम्मुख शिव शक्ति सम्पन्न कलातीता माहेश्वरी स्वरूप है।

व्याकरण और शिव

शिव शब्द शुभावह तथा श्रेयस्कर वस्तु का वाचक होने के कारण सर्वहितकारी है। इसी कारण शिव पर ब्रह्मवाची शब्द होता है ।

'शीङ्' धातु के साथ 'वत' प्रत्यय का योग होने पर 'शिव' शब्द बनता है। यह शब्द नित्य, विज्ञानानन्दघन परमात्मा का वाचक है। इस शब्द की उत्पत्ति 'वशकान्तौ' नामक धातु से भी होती हैं। वशकान्तौ अर्थात् सभी को अपने वश में करने वाला तथा जिसे सभी मानें, जिसको सभी चाहें । 'शं' आनन्द को कहते हैं तथा 'कर' का अर्थ करने वाला होता है अतः जो आनन्द करता तथा करवाता है उसे शंकर कहते हैं ।

जो शक्ति भूतकाल, वर्तमान काल तथा भविष्य काल में सर्वज्ञ रहे उसे त्रिकाली या त्रिनेत्री कहते हैं और यह सम्बोधन पूर्णतः शिव सूचक ही है ।

आभूषण और शिव

जो शक्ति आधिदैविक, आधिभौतिक तथा आध्यात्मिक नामक तीनों प्रकार के शूलों से बचाती है उसे त्रिशूल या त्रिशूली कहते हैं। इस त्रिशूल का सम्बन्ध सर्वप्रथम शिव के द्वारा ही स्वयं के हेतु ही व्यक्त होता है।

जो मृत्यु का स्मरण करवाये उसे मुण्ड कहते हैं। अतः शिवजी मुण्डमाला धारक या मुण्डमाली भी कहलाते हैं।

दृष्टिगोचर होने वाली कोई भी वस्तु चिरस्थायी नहीं है अतः भगवान आशुतोष भस्म रमाये रहते हैं क्योंकि यही सच्चाई है।

विषयों का भोग करना ही विष है क्योंकि विषय-भोगी त्याग, वैराग्य तथा मोक्ष की महिमा नहीं समझ सकता, अतः इस विष को शिवजी पी जाते हैं, परन्तु लोग फिर भी नहीं समझते।

इसी बात को इस भाँति भी समझा जा सकता है।

चिता की भस्म, संसार के मोह की भस्म सूचक है।

मुण्डमाला सांसारिक मोह त्यागने का सूचक है।

शिव का स्वरूप हम सभी भारतियों के लिए 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' है। इनके नाम तथा इनके दर्शन स्वयं में ही वैज्ञानिकता का सागर बने हुए हैं। इनके प्रत्येक रहस्य को समझते हुए जब हम अपने शरीर पर अनासक्ति की भस्म रमा लेते हैं तथा सांसारिक सुखों का त्याग कर देते हैं तो भगवान शिव अनेक होते हुए भी अपने एक मुख्य स्वरूप में दर्शन प्रदान करते हैं। यह तभी होता है जब हम संसार में रहते हुए, पिता होते हुए, पति होते हुए भी इन सभी कर्मों का यथोचित पालन करते हुए संसार से नहीं बल्कि सांसारिक सुखों से वैराग्य ले लेते हैं। वैराग्य का अर्थ सांसारिक सुखों के त्याग से है, परिवार के त्याग से नहीं। हमें परिवार में रहते हुए प्रत्येक कर्म करते हुए वैराग्य की स्थिति तक पहुँचना है जैसे कि शिव स्वयं परिवार रखते हुए वैराग्य का साक्षात चित्रण प्रस्तुत करते हैं।

प्रेमी भक्त और शिव

हम समस्त भारतीय जनों के समक्ष भगवान एक नहीं बल्कि असंख्य स्वरूपों में प्रकट होता है। अपने

असंख्य स्वरूपों के कारण इसे असंख्य सम्बोधनों से सम्बोधित भी किया जाता है परन्तु प्रेम तो एक से ही होता है अनेकों से नहीं। एक स्वरूप से ही प्रेम करने पर वह अनेकों को एक करके प्रकट होता है। सम्भवतः यही कारण है कि शिव सहस्रनाम का पाठ सुनकर शिवजी आते हैं और गायक की श्रद्धा भावना देखकर अश्वथामा को शक्तिकृत करने के लिए वर-दान का दान न देकर उसी में समा जाते हैं।

दिखाई पड़ने वाली अवतारी भीड़ में तत्व तक पहुँचना ही प्रत्येक जीव का चरम् लक्ष्य है। यही अभिलाषा व्यक्ति को सौभाग्य से ही तथ्य तक पहुँचाती है।

प्रेम के विषय में मैं यहां एक कथा कहना चाहता हूं—

एक गाँव में एक ऋषि जी का आगमन हुआ। उनके आगमन के समाचार से गाँव के निवासी प्रफुल्लित हो उठे। उनके पास पहुँच कर यथाशक्ति उनका स्वागत-सत्कार करने लगे।

वह ऋषि जी उस गाँव में लगभग एक मास पर्यन्त रहे। इस काल में एक स्त्री प्रतिदिन रोटियाँ बनाकर लाती और उन्हें सप्रेम भेंट करती; जिसे

ऋषि जी प्रेमविभोर होकर ग्रहण करते थे। इस पूर्ण-विधि में न तो ऋषि ने उस स्त्री को कुछ कहा और न ही उस स्त्री ने उनसे कुछ निवेदन किया।

आज ऋषि जी को उस स्त्री के आगमन की प्रतीक्षा है क्योंकि आज वह यहाँ से प्रस्थान करने वाले हैं। कुछ समयोपरान्त वह स्त्री आयी, उसने प्रणाम किया और दोनों रोटियाँ उनके समक्ष भावविभोर होकर रख दीं। वह भी रोटी खाने लगे। जब वह खा चुके तो उसे पहली बार सम्बोधित करते हुए बोले— "मैं तुम्हारे सेवा कार्य से परम सन्तुष्ट हुआ हूँ। मेरे पास तुम्हें प्रदान करने के हेतु कुछ भी नहीं है फिर भी तुम कहो कि तुम्हें क्या प्रदान करूँ। तुम्हारी वाञ्छा (मनोकामना) पूर्ण कर सका तो मुझे आत्म संतुष्टि होगी।"

उस स्त्री ने हाथ जोड़ दिये और निवेदन किया— दासी किसी अभिलाषा से प्रभावित होकर आपकी चरणानुरागी नहीं बनी थी। आप प्रसन्न हैं तो प्रतीत होता है कि प्रभु प्रसन्न हैं और जब प्रभु प्रसन्न हैं तो झोली फैलाकर मातृत्व सुख की भिक्षा का निवेदन करती हूँ।"

ऋषि जी ने उसे कल आने के लिए कहा और

विचारमग्न हो गये।

अगले दिन जब वह स्त्री आई और उसने प्रेम भाव से विभोर होकर प्रणाम करके रोटियाँ प्रस्तुत कीं तो ऋषि ने कहा—"आज तक तुमने जो मेरी सेवा की और मुझे प्रतिदिवस दो रोटियाँ प्रदान कीं। इसके लिए मुझे क्षमा करें और वह रोटियां ले जायें। मैं इन्हें स्वीकार नहीं कर पाऊँगा क्योंकि मैं तुम्हारी मनोकामना पूर्ण नहीं कर सकता। प्रभु से विदित हुआ और यही विधान है जिसके कारण तुम्हें इस जन्म में मातृत्व की प्राप्ति न हो सकेगी।"

अटल भविष्यवार्ता को श्रवण करके उसके नेत्र अश्रुमय हो गये। मेघों के मध्य चमकने वाली दामिनी की भाँति उसके होंठ हिले और कम्पित स्वर में उस स्त्री के स्वर उभरे—"धन्य ऋषिवर! मेरा कलुषित भाग्य मेरे साथ है। इसमें आपको कोई दोष नहीं लगता। आप भोजन ग्रहण कीजिये।"

अनुनय विनय के पश्चात् भी ऋषि ने रोटी स्वीकार नहीं की, वह अबला निराश होकर रोटियाँ लिए वापस आ रही थी कि बीच डगर में एक नग्न पुरुष को देखकर रुक गई। उसे ध्यान से देखकर उसके पास गई और बोली—"बाबा! रोटी खाओगे।"

उसका स्वर सुनकर बाबा ने उसे देखा और हाथ फैला कर रोटी ले ली। वह रोटी को देखता रहा और अकस्मात् बोला—"माता ! तूने मुझे दो रोटियाँ दीं। जा, तुझे दो पुत्र होंगे।"

और कुछ वर्षों में ही उसे क्रमशः दो पुत्र हुए।

उपरोक्त घटनाक्रम को याद करके वह स्त्री विचारमग्न हो जाती है कि सत्यता क्या है? एक ऋषि के कथनानुसार उसे मातृत्व सुलभ नहीं होगा और एक नग्न बाबा उसे दो रोटियों के बदले दो पुत्र दान कर देता है।

कई वर्षों के पश्चात् पुनः उसी ऋषि का आगमन हुआ तो वह महिला दो रोटियाँ बना कर अपने दोनों बच्चों को साथ लेकर उस ऋषि के पास पहुँची। उसने अपना पूर्व परिचय दिया और रोटियाँ प्रदान करके प्रश्न किया कि क्या प्रभु अनेक हैं ?"

ऋषि ने उत्तर दिया—"नहीं ! वह तो एक है।"

स्त्री ने निवेदन किया—"जब वह एक है तो अपनी इच्छा कैसे बदल लेता है ?" इसके साथ ही उसने अपनी पूर्व कथा कह दी।

यह सब श्रवण करके वह ऋषि बोले—"हे प्रभु भक्तिन् ! तुम श्रेष्ठ हो। तुम्हारा प्रयास श्रेष्ठ है।

वह सर्वशक्तिमान् परमेश्वर तो एक ही है और तुम्हारा प्रश्न युक्ति संगत है। मेरी बात को ध्यान से श्रवण करो। प्रेम केवल प्रेम होता है परन्तु यह दो स्थितियों में दर्शित होता है। प्रथम स्थिति वह होती है जब हम किसी से प्रेम करते हैं। इस स्थिति में यह आवश्यक नहीं है कि जिससे हम प्रेम करते हैं वह भी हमसे प्रेम करे। द्वितीय स्थिति में दूसरा हमसे प्रेम करने लग जाता है जबकि यह आवश्यक नहीं है कि हम भी उससे प्रेम करें। तुम्हारी बात श्रवण करके मैं यही कह सकता हूं कि मैं भगवान से प्रेम करता हूँ। यहाँ यह आवश्यक नहीं था कि वह मेरी प्रार्थना स्वीकार करता क्योंकि प्रेम तो उससे मैं करता हूँ, वह तो नहीं करता। इसी भाँति उस बाबा के विषय में यही कह सकता हूँ कि उसका वचन इस कारण सार्थक हुआ कि भगवान् उससे प्रेम करते हैं।"

प्रेम सदा एक पक्षीय तथा दो पक्षीय हुआ करता है एक पक्षीय प्रेम में अनेकों लोग भटकते हुए देखे जा सकते हैं और दो पक्षीय प्रेम जैसे श्री रामकृष्ण परमहंस और आदि भवानी माता काली जिसने रामकृष्ण परमहंस की कोई बात न टाली।

त्रिगुणातीत शिव

आज जिसे भी देखा जाता है वह अनेकों दुःखों के भार से पीड़ित तथा भ्रमित है। प्राचीन ग्रन्थों का अवलोकन करने पर यह प्रतीत नहीं होता कि दुःख नहीं थे, परन्तु जब कभी लोगों पर दुःख विपत्ति पड़ती थीं तो वह अपने इष्ट का साधन करके देव कृपा स्वरूप विपत्ति का विनाश कर लिया करता था। इसी विशेषता की हमें आज प्रबल आवश्यकता है। क्षीण होती हुई आयु तथा जीर्ण देह के साथ ही समया-भाव के कारण प्रकृति से हम दूर हो गये हैं। यही कारण हमारे अनेकों दुःखों से पीड़ित एवं भ्रमित होने का है। इसी कारण से हम अज्ञानमयी माया के प्रभाव में आ गये हैं कि हम वास्तविक तत्व उस परमपिता सच्चिदानन्द परमेश्वर को भी समक्ष पाकर समझने का प्रयास नहीं करते।

अब प्रश्न उत्पन्न होता है समस्त देवों में ऐसा महान विभूतिमय देव कौन-सा है जिसमें परमतत्व समाया हुआ है और जिसका अवलम्बन स्वीकार करके समस्त दुःखादि से रहित हुआ जा सकता हो।

इस भाँति के प्रश्नों का उत्तर पुराण, शास्त्रतथा

ऋषि मुनियों द्वारा ही प्रस्तुत होता रहा है। देखने पर अनेकों शास्त्र तथा पुराण हैं परन्तु वह सभी कहीं न कहीं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उस करूणानिधि की तरफ संकेत करते हैं जोकि समक्ष है परन्तु हम उससे उदासीन हैं। उस सहज दयालु प्रभु के प्रति हम कितने ही उदासीन क्यों न हों वह तो हमारे प्रति उदासीन नहीं होता।

सृष्टि में जन्म लेने वाला प्रत्येक शिशु इस बात की तरफ स्पष्ट संकेत करता है कि मायामय प्रभु जगत की सृष्टि करते-करते अभी थका नहीं है। यदि वह थका नहीं है तो सो कैसे सकता है। अनेकों स्थलों पर देवों के सोने की कथायें विस्तार से वर्णित की गई हैं। जोकि उनके सोने का प्रमाण है परन्तु कृपा-सिन्धु तो कभी सोता नहीं।

—हृदय सदैव धड़कता रहता है।

—नदिया सदैव बहती रहती हैं।

जब यह सब चलता रहता है तो इसे चलाने वाला भी सर्वदा चलता रहता है, वह कभी सोता नहीं।

जब देवता तथा असुरों ने सम्मिलित होकर क्षीर सागर का मन्थन किया और उससे महोल्वण हलाहल नामक विष निकला। इसके आते ही समस्या प्रधान

हो उठी कि इसे कहाँ रखा जाये क्योंकि इसके प्राप्त होते ही अति उग्र वेग से, दसों दिशाओं में उफनता हुआ वेग प्रस्तुत हो गया। इस विकटता को अनुभव करके सभी शिवजी के पास गये और करुणासिन्धु सभी की दीन हीन स्थिति को देखकर उस विष का स्वयं ही पानकर लेते हैं क्योंकि वह जानते हैं कि किसी अन्य में इतनी शक्ति नहीं है कि इस विष का पान करके सुरक्षित बच जायें। दीनजनों का रक्षण पालन करना ही सामर्थ्यवान पुरुषों का कर्तव्य है। इसी कारण करुणा हेतु, भूतभावन, विषमयी पात्र होठों से लगाकर तीव्र हलाहल का पान कर लेते हैं।

श्रीमदभागवत् के अष्टम स्कन्द में वर्णित यह प्रसंग क्या उस परमतत्व की तरफ स्पष्ट संकेत नहीं करता ? यदि देखकर भी न देखें, समझकर भी न समझें तो इसका कोई प्रत्युत्तर नहीं है।

हाट (बाजार) से बाहर रहने पर अत्यधिक शोर सुनाई पड़ता है जिसे सुनकर हाट में वार्ता करनी भी असम्भव प्रतीत होती है। इस शोर को सुनकर जो लौट गया, वह लौट गया और जो हाट में प्रवेश कर जाता है तो वही अनुभव करता है कि बाहर सुनाई पड़ने वाला शोर हाट के अन्तर में नहीं होता। यहाँ

सर्वशान्ति होती हैं जिस कारण अपने मनोनुकूल पदार्थों का क्रय किया जा सकता है।

यही स्थिति भगवद् भजन के लिए विभिन्न दृष्टांतों के द्वारा कही गई है। अनेकों दृष्टाँतों के द्वारा विभिन्न स्वरूपों की महत्ता को प्रभाणित किया जाता हें जबकि वांस्तविकता इसके विपरीत हुआ करती हैं।

सदैव ध्यान रखें और यही सत्य है कि भगवान की प्राप्ति हेतु किसी दृष्टांत की नहीं बल्कि श्रद्धा तथा विश्वास की आवश्यकता हुआ करती है। प्रायः दृष्टांत उसकी प्राप्ति में सन्देह अंकुरित कर दिया करते हैं क्योंकि दृष्टांत कर्ता जिसे मानता है उसी की विशेषता को प्रस्तुत करता है।

दृष्टाँत है कि धन्ना भगत ने पत्थर में भगवान को पाया था परन्तु दृष्टांत यह नहीं है कि प्रत्येक धन्ना को पत्थर से भगवान मिला हो।

भगवान तो सभी को सुलभ हैं, आवश्यकता है तो केवल अपने हृदय पटल पर भगवान के प्रति विश्वास का दीप जलाने की।

यह मान्यता है कि—
"जर्रे जर्रे में खुदा है।"
—और मैं कहता हूँ कि—

"ऐ बन्दे तू उससे क्यों जुदा है ?"

आध्यात्म शब्द अपने आपमें ही एक विशेषता रखता है और इसका कारण यदि है तो वह केवल इतना ही है कि इसके द्वारा सभी रहस्य सुलझ जाते हैं। आधुनिक शिक्षा पद्धति में जिसे 'रसायन विज्ञान' कहा जाता है वह आध्यात्मिक विद्या का सुन्दरतम अंश है फिर भी यह स्वीकार किया ही जायेगा कि संसार में प्रचलित सभी विद्याओं में केवल रसायन विज्ञान के द्वारा ही रहस्य सुलझते हैं। हम आप अनादिकाल से जिसे जल कहते हैं उसे रसायन विज्ञान भी जल स्वीकार करता है परंतु उसका रहस्य भी प्रस्तुत करते हुए कहता है कि यह जल आक्सीजन और हाईड्रोजन का १:८ का मिश्रण है।

इसी भाँति आध्यात्म से अनेकों रहस्यों को जानने की चेष्टा की जाये तो चेष्टा सफलीभूत हो ही जाया करती है।

वैदिक शास्त्रों और पुराणों की मूल भाषा संस्कृत है। यह प्रचलित है कि प्रत्येक शब्द के दो अर्थ होते हैं परंतु हमारी संस्कृत भाषा में एक ही शब्द के अनेकानेक अर्थ व्यक्त होते हैं, इसी कारण किसी शब्द का मौलिक अर्थ व्यक्त कर पाना प्रायः असम्भव हो जाता

है। 'देव' शब्द महादेव का सम्बोधन है। देव, शब्द प्राणियों के नाम का भी पूरक है जैसे रामदेव, नामदेव आदि देव का अर्थ देने के लिए भी प्रयुक्त होता है। इसी भाँति से मूल तथ्य प्रायः एक ही शब्द की तह में लुप्त हो जाया करता है और इसे जानकर रचनाकार की मौलिकता का अनुभव प्राप्त होता है।

प्राचीन ग्रंथों में प्रस्तुत किये गये तथ्य तीन रूपों से जाने जा सकते हैं–

—आधिभौतिक

—आधिदैविक तथा

—आध्यात्मिक

एक स्त्री थी अहिल्या। यह गौतम ऋषि की अर्द्धांगिनी थी और अत्यधिक रूपवती थी। इसके रूप से प्रभावित होने के कारण कामुक होकर इन्द्र ने गौतम ऋषि की अनुपस्थिति में अहिल्या के साथ व्यभिचार किया। इस कार्य का पता चलने पर गौतम ऋषि ने अहिल्या को श्राप देकर शिला बना दिया। श्राप सुनकर अहिल्या ने श्राप मुक्ति का उपाय पूछा तो उन्होंने श्रीराम के आगमन पर श्राप की मुक्ति का उपाय कहा। तत्पश्चात् इन्द्र को श्राप दिया कि तूने एक

भग के साथ भोग किया है तेरी देह पर असंख्य भग हो जायेंगी।

दृष्टांत होता है विश्वास जगाने के लिये। यदि इस दृष्टांत को आधिदैविक दृष्टि से देखा जाये तो शब्दशः सत्य प्रतीत होता हैं क्योंकि श्राप के शब्द श्रवण करके अस्थि माँसमयी अहिल्या पत्थर बन जाती है और इन्द्र की देह पर असंख्य भग बन जाती हैं।

इसी घटनाक्रम को आधिभौतिक दृष्टिकोण से जानने का प्रयास किया जाये तो निम्नलिखित तथ्य उभरते हैं—

एक ऋषि थे जिसका नाम था गौतम। उसके पास अहिल्या नामक भूमि थी। इस भूमि पर वह खेती नहीं करते थे क्योंकि वह उनकी तपःस्थली थी। तपःस्थल को साफ व स्वच्छ रखना हितकर मानते थे।

इन्द्र को वर्षा का देवता माना जाता है। एक बार इन्द्र उसी अहिल्या नामक भूमि पर अत्यधिक वर्षा कर देते हैं जिस कारण वहाँ पर धान्यादि की उत्पत्ति हो जाती है। गौतम ऋषि अपने इस स्थल की दुर्गति को देखकर क्रोधित हो उठते हैं और यह सोच-कर कि अहिल्या जब तक भूमिरूपा रहेगी तब तक

इन्द्र के कारण यह उत्पादन करती रहेगी अतः इसे पत्थर हो जाने का श्राप देकर पत्थर कर देते हैं क्योंकि पत्थरों पर इन्द्र की वर्षा का प्रभाव न होगा।

परन्तु उपरोक्त तथ्य के स्थान पर निम्नलिखित तथ्य अधिक प्रामाणिक लगता है–

गौतम नामक एक किसान था जिसके पास अहिल्या नामक भूमि थी जोकि अत्यधिक उपजाऊ थी। एक बार इन्द्र ने वहाँ पर अत्यधिक वर्षा की जिस कारण मिट्टी बह गई और भूमि उपजाऊ न रही। यह स्थिति देख कर ऋषि ने उस भूमि को पत्थर होने का श्राप दे दिया और इन्द्र को असंख्य भगमयी होने का।

श्राप के प्रभाव से उपजाऊ अहिल्या पत्थर की हो गई। इन्द्र बादलों के रूप में आकर बरसे थे अतः बादलों में असंख्य भग हो गये जहाँ से आज भी रात्रि-काल में सितारे टिमटिमाते हुए दृष्टिगोचर होते हैं।

इसी तथ्य को आध्यात्मिक दृष्टिकोण से देखा जाये तो निम्नलिखित तथ्य स्पष्ट होते हैं–

एक जीव था जिसका नाम गौतम था। उसके पास अत्यधिक रूपवती अहिल्या नामक बुद्धि थी। इन्द्र वर्षा करने के लिए चंचल बादलों का सहारा लेता है

अतः इन्द्र चंचल कहा जायेगा। चंचलता रूपी चित्त में अनेकों शंकाओं का जन्म होने से बुद्धि भ्रमित हो उठी। गौतम को इस स्थिति से क्लेश होता है और वह उसे श्राप देकर पत्थर कर देते हैं।

इसी भाँति प्रत्येक तथ्य को जान कर ही दृष्टांत प्रस्तुत करना चाहिये न कि 'जैसा निर्देशक वैसा उपदेशक' वाले सिद्धांत पर आश्रित हुआ जाये। एक विद्वान ने श्लोकार्थ प्रस्तुत किया और अन्य ने उसी अर्थ को अपने अपने शब्दों में परिवर्तित कर दिया। यही स्थिति आज हमारे साहित्यिक जगत की है। वह न्यूटन ही था जिसने सोचा सेब वृक्ष से नीचे ही क्यों गिरा ऊपर क्यों नहीं चला गया।

इसी के शब्दों को आज विभिन्न विद्वान अपने-२ शब्दों में व्यक्त करते हैं जबकि न्यूटन से पहले भी सेब नीचे ही गिरा करते थे।

सृष्टि के रहस्यों को शिवजी की तस्वीरों के द्वारा भी समझने का प्रयास किया जाये तो आधिदैविक दृष्टिकोण से वही तथ्य प्रस्तुत होगा जिससे हम सब परिचित हैं।

शिवजी की जटाओं से गंगा का अवतरण।

यह आधिदैविक है और आधिभौतिक दृष्टिकोण से गंगा अवतरण वाला स्थल ही शिव का जटामयी सिर है। ऐसा प्रमाणित होता है। इसी तथ्य को आध्यात्मिक दृष्टिकोण से देखा जाये तो शिव अमृत-मयी सृष्टि पालन तथा संहार कर्त्ता हैं तो उनके सिर से प्रकट होने वाली जलधारा यह प्रमाणित करती है कि सृष्टि में व्याप्त जल शिव स्वरूप है। जल के द्वारा अन्नादि की प्राप्ति होती है। इसे पीने से प्यास बुझ जाती है। मृत्युपरान्त देह को जलाया या दफनाया न जाये तो उससे पुनः जल प्रवाहित होकर बाहर निकल जाता है जिससे प्रमाणित होता है कि शव गल रहा है।

इसी उदाहरण के अनुसार प्रत्येक रहस्य को जाना जा सकता है। इस पर भी इस तथ्य में संदेह नहीं है कि महामायामय सृष्टि कर्ता भगवान आशुतोष को इस सृष्टि में कुछ भी हो पाना असम्भव नहीं है।

प्रणव का प्रादुर्भाव और शक्तियाँ

एक बार प्रजापति ने सम्पूर्ण सृष्टि का निर्माण करने के लिए आध्यात्मिक चिन्तन किया जिसके फल-

स्वरूप त्रयी विद्या की उत्पत्ति हुई। इस अभितप्त विद्या से 'भुः' 'भुवः' तथा 'स्वः' उत्पन्न हुये और इन्हीं से उत्पन्न हुआ प्रणव।

प्रवण में तीन अक्षर तथा दो रूप हैं जोकि निम्नलिखित हैं—

प्रणव के दो रूप

सौपाधिक	निरुपाधिक
ब्रह्म	परब्रह्म
अवर ब्रह्म	परब्रह्म
अपर ब्रह्म	परब्रह्म
शब्द ब्रह्म	परब्रह्म
मूर्तः असत्य	अमूर्तः सत्यः
अधि मात्र	अमात्र
मृत्यु युक्त	अव्यवहार्य
मृत्युयुक्त	प्रपञ्चोपशम अद्वैत

प्रणव ओंकार अर्थात ॐ को कहते हैं और मुख्यतः इसमें तीन शब्द होते हैं—अ, उ, म्। यह शब्द त्रिक हुये और त्रिशूल, त्रिपुर आदि शब्द कहाँ पर संकेत करते हैं यह स्पष्ट हो जाता है। हमारी संस्कृति

इसी त्रिक का तो उपहार है। तीन गुण हमारी देह में कार्यरत हैं, वायु, कफ तथा पित्त सृष्टि में कहीं भी देखें तो यही त्रिक अपने विभिन्न स्वरूपों में लक्षित होता है। प्रणव के त्रिक अर्थात तीनों शब्द क्या कहते हैं ? जरा अवलोकन करें—

अ	उ	म्
गायत्री	त्रिष्टुप	जगती
जाग्रत	स्वप्न	सुषुप्ती
प्रातः	मध्य	रात्रि
२४ वर्ष	४४ वर्ष	४८ वर्ष
वसु	रुद्र	आदित्य
वसन्त	ग्रीष्म	शरद्
आज्य	इध्म	हवि
भुः	भुवः	स्वः
पृथ्वी	अन्तरिक्ष	द्यौः
ऋक्	यजुः	साम
अग्नि	वायु	जल
वाक्	प्राण	मन
होता	अध्वर्यु	उद्गाता
सत्त्व	रज	तम
अम्बा	अम्बिका	अम्बालिका

विष्णु	ब्रह्मा	शिव
सरस्वती	काली	लक्ष्मी
ज्ञान	क्रिया	इच्छा
मन	कर्म	वचन
मन	तन	धन
इडा	सुषुम्ना	पिंगला

प्राचीन वैदिक वाङ्मय में और मुख्यतः उपनिषदों में ओंकार की विशेषता पर महत्व प्रकट किया गया है। ओंकार को यहाँ तक कहा है कि यह परमात्मा का मुख्य वाचक शब्द है।

सम्पूर्ण सृष्टि में श्रुतिमधुर यदि कोई शब्द है जिसे कि प्राणी सहज स्वभाववश ही आनन्दातिरेक की अवस्था में प्रयोग कर सकता है तो वह एक ही शब्द है जोकि प्रणव का अपभ्रंश है।

सृष्टि में प्रवेश ले लेने के पश्चात् प्रथम बार जब नवजात बालक शब्द उच्चारण करता है तो वह शब्द होता है 'ओ' या 'आ'।

नवजात बालक के द्वारा उच्चारित इस शब्द को जानने के लिये जिस शब्दकोश की आवश्यकता पड़ती है उसे 'वेद' कहते हैं। वेद के शिरोभाग पर प्रकाश डालने वाली विद्या को 'उपनिषद' कहते हैं।

केवल उपनिषदों के द्वारा ही पराविद्या का ज्ञान पुञ्ज आलोकित होता है। चूँकि पराविद्या एक सर्वश्रेष्ठ विद्या है और इसका ज्ञान केवल वेद के ज्ञान से ही प्राप्त होता है अतः इसे वेदान्त भी कहते हैं। यहीं पर प्रणव के विषय में ज्ञान प्राप्त होता है।

शान्तं शिवमद्वैतं चतुर्थं मन्यन्ते स आत्मा।

अर्थात् प्रणव स्वरूपी परमात्मा के ही चतुर्थ पाद को शांत, अद्वैत, परब्रह्म को ही शिव कहा गया है।

ॐ को व्याकरणानुसार अ उ म् के संयोग से माना जाता है।

अ उ म् के संयोग से ॐ अव्युत्पन्न प्रतिपादिक है।

'अव' धातु से औणादिक 'मन' प्रत्यय का संयोग होने से भी ॐ बनता है जो कि व्युत्पन्न प्रतिपादिक है अतः 'अव' धातु के जितने भी अर्थ[1] होते हैं वह सभी यहाँ प्रयुक्त होंगे और यही विशेषता ॐ से प्राप्त होगी या ॐ में निहित होगी।

शिवलिंग के साथ इसका सामंजस्य स्पष्ट प्रतीत

---

१. रक्षण, गति, कान्ति, प्रीति, तृप्ति, प्रवेश, श्रवण, याचन, क्रिया, अभिलाषा, दीप्ति, आलिंगन, हिंसा, दान और वृद्धि।

होता है। और यह प्रमाणित हो जाता है कि ॐकार ही शिव है और शिव ही ॐकार है क्योंकि शिवलिंग ॐकार का जीवन्त प्रमाण है (उपरोक्त वर्णनानुसार) और शिवलिंग स्वयं शिव ही हैं अन्य कोई नहीं।

आत्मा, अनात्मा और–परमात्मा

जगत में तीन वस्तुएँ सदैव विद्यमान रहती हैं जो कि आत्मा, परमात्मा और अनात्मा के नाम से जानी जाती हैं।

हम देहधारियों में आत्मा निवास करती है और जगत में दृष्टिगोचर होने वाले सभी पदार्थ आनत्मा होते हैं। यह अनात्म पदार्थ हमें सुख प्रदान करते हैं और इनकी प्राप्ति या इनका भोग हम कर सकते हैं इसी कारण हम इसे अपने अनुकूल मानते हैं। जब कि सत्य यह है कि हम तो बदल सकते हैं परन्तु सृष्टि का चक्र कभी भी बदलता नहीं है। जब ग्रीष्म ऋतु आती है तो न चाहते हुये भी हमें उष्णता को स्वीकार करना पड़ता है। इस सबका कारण केवल यही है कि यह जगत नाशवान है और नाशवान वस्तु से सदा सुख नहीं मिला करता। ग्रीष्म चला जाता

है तो शीत ऋतु का पदार्पण हो जाता है। इस नाशवान जगत का यह क्रम कभी भी भंग नहीं होता।

चूंकि यह जगत नाशवान है इससे हमें सुख कैसे मिल सकेगा ? आत्मा और अनात्मा का साथ कैसे निभेगा ? अनात्मा तो नाशवान है। यह अपने स्वभाव कभी नहीं बदलेगा अतः इस जगत के समस्त पदार्थ हमारी सुविधानुसार हो जायें, यह कल्पना करना भी व्यर्थ है।

हम आत्मा हैं अतः हम नित्य हैं। यह अनात्मा है अतः अनित्य है। हम दोनों में सुखद सम्बन्ध सम्भव ही नहीं क्योंकि विषम सम्बन्ध सर्वदा दुःखदायी हुआ करते हैं।

आत्मा और परमात्मा के मध्य सम्बन्ध सर्वदा सुखदायक होगा क्योंकि आत्मा और परमात्मा सर्वदा नित्य हैं। यह सम्बन्ध सुखकारी इसीलिये होगा कि हममें और भगवान में साम्य है।

प्रत्येक जीव अपने अपने कर्म करता है और कर्म तीन विभिन्न भाँति के होते हैं जो कि निम्नलिखित हैं—

—प्रारब्ध,

—संचित एवं

—क्रियामाण।

प्रत्येक जीव के क्रियामाणक कर्म के समापन पर उसे प्राप्त होने वाला शुभाशुभ संचित कोष में चला जाता है और समयानुसार यह संचित हुआ शुभाशुभ जब अपने फल देना प्रारम्भ कर देता है तो प्रारब्ध बन जाता है। इसी प्रारब्ध का भोग अवश्यंभावी है। इसका भोग किये बिना छुटकारा प्राप्त न होगा। यही प्रारब्ध हमारी वासनाओं का जनक है और वासना जाग्रत होती है अनात्म को देखकर। यही अनात्म है जिसके कारण हम श्री भगवान के चिन्मय, ज्ञानमय, आनन्दमय रूप का आत्म साक्षात्कार नहीं कर पाते।

माता की कोख से प्रारम्भ होकर धरती की गोद में विलीन हो जाने तक आत्मा का अनात्मा से संघर्ष-मयी प्रेम चलता ही रहता है। वह विरले ही होते हैं जो अनात्म से सम्बन्ध विच्छेद करके परमात्मा में लीन हो जाते हैं।

मोहनजोदड़ो हड़प्पा की खुदाई से प्राप्त प्राचीन निदर्शनों का अवलोकन करने पर यह ज्ञात होता है कि उस समय के लोग भी अनात्मा का लोभ न करते हुए परमात्मा से जुड़े हुये थे क्योंकि उक्त खुदाई से विभिन्न भाँति के शिवलिङ्ग प्राप्त हुए हैं।

शिवलिङ्ग को यदि ध्यान से देखा जाये तो दो ही रूप दृष्टिगोचर होते हैं–लिंग और योनि और यही तो सृष्टि का मूल रहस्य है ।

शिव और शक्ति

पुरुष और स्त्री के पारस्परिक संयोग के बिना जगत की सृष्टि का कार्य सम्पन्न नहीं हुआ करता। अतः निम्नलिखित तथ्य स्पष्ट हैं—

शिव और शक्ति,

ईश्वर और माया,

पुरुष और प्रकृति

स्थान भेद से चाहे जिस किसी भी नाम का उच्चारण किया जाये, सर्वत्र ही दो मूल शक्तियों के पारस्परिक सहयोग से ही सृष्टि प्रभृति कार्य पूर्णतः सम्पन्न होते हैं और इनका परिचायक चिह्न शिवलिङ्ग है ।

हमने प्रायः देखा है कि इस विस्तृत विशाल भू-मण्डल का मानचित्र कितना लघु होता है । प्रायः प्रत्येक गृह में प्राप्त होने वाले भूमण्डलीय मानचित्र में करोड़वे भाग का एक अंश मात्र ही हुआ

करता है कारण होता है कि एक जरा से कागज पर और यही विशाल भूमण्डल समा सकता है जिस भाँति से इस जरा से कागज पर विशाल भूमण्डल देखा जा सकता है उसी भांति से शिवलिङ्ग में उस सर्वव्यापी परमेश्वर को देखा जा सकता है। एक कागज पर सिमटे हुये भूमण्डल की विशालता तब ही प्रमाणित होती है जब कोई एक क्षितिज से दूसरे क्षितिज की तरफ यात्रा करता है। इसी भांति से परमपिता परमेश्वर की सर्वव्यापकता तभी समझ में आती है जब उसे कोई समझना चाहे और इसके लिये आत्मा को अनात्मा से नहीं बल्कि परमात्मा से लयबद्ध करना होगा।

जगत में सर्वोपरि माने जाने वाले त्रिदेवों में अन्तर करना बहुत भला प्रतीत नहीं होता और शास्त्रादिक विद्वानों का भी मत है कि इनमें भेद नहीं जानना या मानना चाहिये। मैं भी यहाँ पर भेद प्रस्तुत नहीं कर रहा बल्कि वास्तविकता का साङ्गोपांग वर्णन कर रहा हूँ। चन्द्रमा रात्रि के समय स्निग्ध चाँदनी का दान किया करता है और सूर्य दिन के समय अपनी तपिश का परिचय प्रस्तुत करता है। कोई भी समझदार व्यक्ति यह कभी भी नहीं कहेगा

कि चन्द्रमा तपिश देता है और सूर्य स्निग्ध चाँदनी। जबकि आज प्रमाण के लिये यदि कोई प्रत्यक्ष देव है तो वह सूर्य और चन्द्रमा ही हैं फिर भी यह लोग अपना कार्य कभी भी बांटते नहीं हैं।

कोई भी कार्य कर्त्ता कोई भला कार्य करके उसकी भलाई प्राप्त करने के बदले अन्य किसी व्यक्ति के द्वारा उस भले कार्य की सम्पन्नता को प्रमाणित करता है तो उस कार्यकर्त्ता के हृदय की यह विशालता ही कही जायेगी। यही स्थिति शिव की है। स्वयं ही जगत नियन्ता होते हुए भी त्रिदेवों के रूप में प्रस्तुत होकर केवल संहारमयी बन कर समाधिस्थ हो जाते हैं। ब्रह्मा सृष्टि के कर्त्ता, विष्णु पालन कर्त्ता और शिव ध्यानमग्न हैं।

एक बार इन्हीं दोनों देवों में परस्पर प्रतिस्पर्धा हो उठी कि हममें बड़ा कौन है ? बड़ा अर्थात हमें भी बनाने वाला। यह महत्त्वपूर्ण बात करते हुए भी शिव माया से भ्रमित होकर वह स्वयं को बड़ा प्रमाणित करने में लगे हुये थे। इसे देखकर भगवान कृष्ण का स्मरण हो आता है कि उसके भी सृष्टा वासुदेव और पालक नन्द थे। उनके भी हृदयों में यह सूक्ष्म प्रश्न अंकुरित हुआ होगा जबकि वास्तविकता यह है

कि सबसे बड़ा वह जिसने माया फैलाई।

इसी भाँति इनमें विवाद चल रहा था कि वातावरण में एक अनोखी चमक, गन्ध तथा स्वर का अनुभव करके वह दोनों उधर ही देखने लग गये और उन्होंने देखा कि एक बहुत ही अजीब परन्तु विशाल वस्तु का प्रादुर्भाव हुआ है। उन्होंने उसे देख कर परस्पर निर्णय लिया कि जो उस वस्तु का अन्तिम भाग स्पर्श करके आयेगा वही ईश्वर कहलायेगा।

इस निर्णय को स्वीकार करके ब्रह्मा जी हंस बने और उसका अग्रभाग स्पर्श करने के लिये ऊपर की तरफ उड़ गये। इसके विपरीत विष्णु जी ने उसका नीचे का भाग स्पर्श करना चाहा अतः वाराह बन कर भूमि में प्रवेश कर गये।

लिङ्ग पुराणानुसार ब्रह्मा जी हजारों वर्षों तक उड़ते रहे और विष्णु जी वाराह बनकर धरती में अन्तहीन गहराईयों की तरफ बढ़ते रहे परन्तु किसी को भी उसका आदि और अन्त नहीं मिला अतः दोनों निराश होकर लौट आये। एक दूसरे को असफल देख कर एक अन्जानी शक्ति के होने का विचार करके उसके आगे निवेदित हुए तो 'ॐ' शब्द का क्रमशः उच्चारण होने लगा। आवाज वाली दिशा की तरफ

देखा तो वहाँ भगवान शिव बैठे हुये थे। उन्होंने इन्हें बताया कि यह प्रकाशमान वस्तु जो आप लोग देख रहे हैं यह शिवलिङ्ग है।

शिवलिङ्ग को यदि ध्यान से देखा जाये तो इसमें सर्वप्रथम एक पुरुषेन्द्रिय दिखाई देती है। इसकी स्थिति एक आधार पर दृढ़ होती है। इस आधार को पिण्डी कहते हैं। इसे और भी स्पष्ट शब्दों में व्यक्त किया जाये तो इसे योनि कहते हैं। इस भाँति से शिव लिङ्ग योनि और पुरुषेन्द्रिय का सम्मिलित एक अनोखा ही रूप है।

सृष्टि के कार्य के लिये इनका एक दूसरे में लीन होना एक आवश्यक प्रक्रिया है। अतः शिवलिङ्ग के द्वारा सृष्टि के जन्मदाता शिव ही प्रमाणित होते हैं।

शिव प्रस्तुत होते हैं लिंग के रूप में और उनकी शक्ति प्रस्तुत होती है योनि के रूप में।

इस जगत में आदि से अन्त तक जो भी माया दृष्टिगोचर होती है वह अन्य कुछ भी नहीं केवल शिव-शक्ति की माया ही है।

विभिन्न धारणायें और शिवलिंग

शिवलिंग के विषय में प्रायः विद्वजन और आलोचक श्लील और अश्लील का भेद व्यक्त करते हैं। व्यक्तिगत संस्कार एवम् सामाजिक मर्यादाओं को देखते हुये इस भाँति के आलोचनात्मक विचार यदि जन्म ले लें तो यह कोई आश्चर्य की बात नहीं होगी जबकि इस सत्यता से कोई भी विद्वान या मूढ़ इन्कार नहीं कर सकता कि प्रत्येक व्यक्ति अपने वस्त्रों के नीचे नग्न हुआ करता है। नग्न काया युक्त पवित्र चित्त वाले नन्हे से शिशु की दृष्टि में श्लील या अश्लील कुछ भी नहीं हुआ करता। इस शिशु की भांति ही शुद्ध चित्त से हमें सर्वत्र देखना चाहिए क्योंकि इसी दृष्टिकोण के आधार पर ही श्लील और अश्लील की दीवार ध्वस्त होगी। इसके पश्चात ही हमें अपने हृदय में और सृष्टि की प्रत्येक वस्तु में उसी परमपिता परमेश्वर की उज्जवल मूर्ति दर्शित होगी जिसे देखकर हम सर्वश्रेष्ठ आनन्द की उपलब्धि कर सकेंगे।

जब हम शिवलिङ्ग की तरफ दृष्टि उठाते हैं या इस विषय पर वार्ता करते हैं तब योनि तथा लिंग

स्पष्ट होता है परन्तु यह योनि तथा लिंग शिवलिंग के रूप में होता है। वैदिक काल में की जाने वाली सभी साधनायें प्राय वैदिक साधनायें कहलाती हैं। इन्हीं साधनाओं में यज्ञकुण्ड तथा यज्ञाग्नि का स्थान इसी शिवलिंग को प्राप्त था।

शास्त्रों में अनेक स्थलों पर यह देखने में आता है कि हवन करने के लिये जो वेदी बनाई जाती है उसे कुण्ड कहते हैं और कुण्ड को प्रकृति कहते हैं। प्रकृति ही योनि रूपा है। इसी कारण इसे योनि कहते हैं। इस कुण्ड में जो अग्नि प्रज्वलित की जाती है उसे रुद्र कहते हैं। रुद्र ही शिव है अतः इस अग्नि को शिव ज्योति कहते हैं।

प्राचीन इतिहास का मनन करने पर यह तथ्य पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है कि पृथ्वी पर प्राचीन सभ्य जातियों में शिवलिङ्ग की उपासना अत्यधिक प्रचलित थी।

हमें यदि परमात्मा से मिलना या उसे पाना है तो एक निश्चित नियम सर्वदा स्मरण रखना होगा कि –"परमात्मा की इस परम प्रिय सृष्टि में ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है जिसे कि अपवित्र कहा जाये।

अर्थात इस सृष्टि में अपवित्र कहलाने वाली कोई भी वस्तु नहीं है।"

मृत्यु शय्या पर पड़े हुये भीष्म पितामह युधिष्ठिर को समझाते हैं कि तुम संवेदनशील बनकर इस भाँति से उदास न हो, बल्कि प्रसन्न रहो।

इसके पश्चात् शिवलीलामृत का उपदेश देते हैं जिसमें कि शिवलिङ्ग की वृहद प्रशंसा करते हैं।

लंकाधिपति रावण को पराजित करने के लिये समुद्र स्थल के किनारे भगवान राम एक शिवलिङ्ग बना कर विशेष उपासना करते हैं जिसके प्रभाव स्वरूप रावण मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। भगवान राम द्वारा निर्मित वह शिवलिंग आज भी रामेश्वरम् के नाम से स्थित है।

महाभारत एक ऐतिहासिक ग्रन्थ है। जबकि रामायण एक धार्मिक ग्रन्थ है। इस भाँति यदि ज्ञान चक्षुओं को खोलकर देखने का प्रयास किया जाये तो शिवलिङ्ग की महत्ता स्वतः ही प्रकट हो जाती है।

भगवान शिव से जो चैतन्य शक्ति उत्पन्न होती है और उसी शक्ति से चिन्मयादि पुरुष प्रकट होते हैं वही यथार्थ में शिवजी के लिङ्ग होते हैं क्योंकि इन्हीं

के द्वारा इस चराचर जगत की पुनः पुनः उत्पत्ति होती रहती है।

इस्लाम धर्म के मानने वाले यह मानते हैं कि उनका 'पवित्र कुराने मजीद' स्वयं अल्लाहमियाँ ने रचा था। यही कारण है कि वह उसे पूर्ण सम्मान देते हैं और उसके समकक्ष किसी भी अन्य ग्रन्थ को नहीं मानते। इसी विशेषता को यदि हम स्वयं में उतार लें और शिव की भाँति ही शिव पुराण को आदि ग्रन्थ स्वीकार करलें तो शिवलिङ्ग का रहस्य स्वतः ही स्पष्ट हो जायेगा। शिवपुराणानुसार समस्त लिंग पीठ प्रकृति देवी पार्वती रूपा है और लिङ्ग को साक्षात् चिन्मय पुरुष रूपी शिव समझना चाहिये।

लिङ्ग शब्द का साधारणतः अर्थ चिह्न या लक्षण होता है। साँख्य दर्शन में इसे प्रकृति कहते हैं। दैविक विषयों में यह शिवजी से सम्बन्धित माना जाता है।

विद्वान टाड अपने लेखों में लिखते हैं कि मुहम्मद साहब से प्रथम एक अरबी देवता की उपासना लिङ्ग के रूप में होती थी जिसे कि 'लात' शब्द से सम्बोधित किया जाता था। सोमनाथीय शिवलिङ्ग को पश्चिम में लात ही माना जाता है। लात नामक

प्रतिमा एक ही पत्थर का लिङ्ग रूपी टुकड़ा था जो कि पचास पुरुष[1] ऊँचा था। जहाँ पर यह स्थापित था उसमें इसे संभालने के लिये ठोस स्वर्ण द्वारा निर्मित छप्पन खम्भे थे।

विद्वान रिचर्डसन ने लिखा कि अल्लाह की सबसे बड़ी कन्या का नाम 'लात' था। इसी कन्या की मूर्ति एक चिह्न की भाँति लिङ्ग रूपा थी।

उपरोक्त 'लात' के विषय में तो अवशेष प्राप्त नहीं होते क्योंकि महमूद गजनवी सारा स्वर्ण लूट कर ले गया था और इस्लाम के द्वारा भी इसकी सुरक्षा न हो सकी। इस पर भी मक्का में आज भी एक लिङ्ग स्थापित है जिसे कि मक्केश्वर लिङ्ग कहते हैं। यह काले पत्थर द्वारा निर्मित है और इस्लाम में इसे अवसद कहा जाता है।

शिलाखण्ड और शिवलिंग

साकार भगवान को कोई भी व्यक्ति देख नहीं सकता। इसी कारण यदि कोई कहने लगे कि

१. उस काल में मापने का यही एक मात्र तरीका था, जैसे कि आज कल भी लोग अगुलियों से नापते हैं।

भगवान का आस्तित्त्व नष्ट न हो जायेगा। दिन की रोशनी में सितारे दर्शित नहीं हुआ करते। इस कारण यदि कोई कहे कि सितारे होते ही नहीं हैं तो सितारों का अस्तित्त्व समाप्त न हो जायेगा। यह सभी जानते हैं कि सितारे होते हैं परन्तु दिन के समय दिखाई नहीं पड़ा करते। जिस भाँति दिन के सितारे नहीं दिखाई पड़ते उसी भाँति हमें भगवान दिखाई नहीं देते। दुग्ध में मक्खनादि प्रायः रहा करते हैं परन्तु वह भी दिखाई नहीं दिया करते। इससे मक्खन प्राप्त करने के लिये दुग्ध मन्थन करना पड़ता है। इसी भाँति से हमें माया और अहंकार के आच्छादन से मन्थन करना होगा और यदि इस कार्य में सफल हुये तो ही हमें भगवान दृष्टिगोचर होगा।

यह लोक कथा है कि धन्ना भक्त ने एक शिला खण्ड से भगवान को प्राप्त कर लिया था परन्तु यह विचारणीय विषय है कि उसने माया और अहंकार से सम्बन्ध विच्छेद करके उसे भगवान रूपी माना, उसी में श्रद्धा रखी, विश्वास किया, तभी तो क्षीर सागर पर शेषनाग की शय्या के ऊपर निद्रामग्न भगवान भी जग कर दौड़े चले आये। इस कथा में जहाँ श्रद्धारूपेण सत्यता भरा विश्वास है वहीं यह

तथ्य भी स्पष्ट है कि प्रत्येक धन्ना को भगवान नहीं मिलते और प्रत्येक शिलाखण्ड से भगवान नहीं निकलते।

जल एकरूपा और एक समान होता है। इसी जल को गंगा जल, यमुना जलादि के नामों से पुकारा जाता है। मूलतः जल एक ही है परन्तु इसे ही कोई जल कहता है, कोई नीर कहता है, कोई पाणी कहता है, कोई वाटर कहता है, कोई एकोया कहता है, कोई अप कहता है। जिस भाँति एक ही जल को विभिन्न स्थलों पर विभिन्न नामों से स्मरण किया जाता है; उसी भाँति भगवान को कोई हरि कहता है, कोई राम कहता है, कोई श्याम कहता है, कोई गॉड कहता है, कोई वाहगुरू कहता है, कोई अल्लाह कहता है जबकि भगवान एक ही है अनेक नहीं। इस सृष्टि में यदि कुछ सत्य है तो वह है भगवान। सम्भवतः इसी कारण भारतीय नवीन धर्म जो कि सिक्ख धर्म कहलाता है सत्य श्री अकाल कहते हैं। सत्य श्री अकाल अर्थात् प्रत्येक काल में सत्य (भगवान) सर्वदा विद्यमान रहे। इस शब्द का प्रयोग वह लोग अभिवादन के स्थान पर करते हैं।

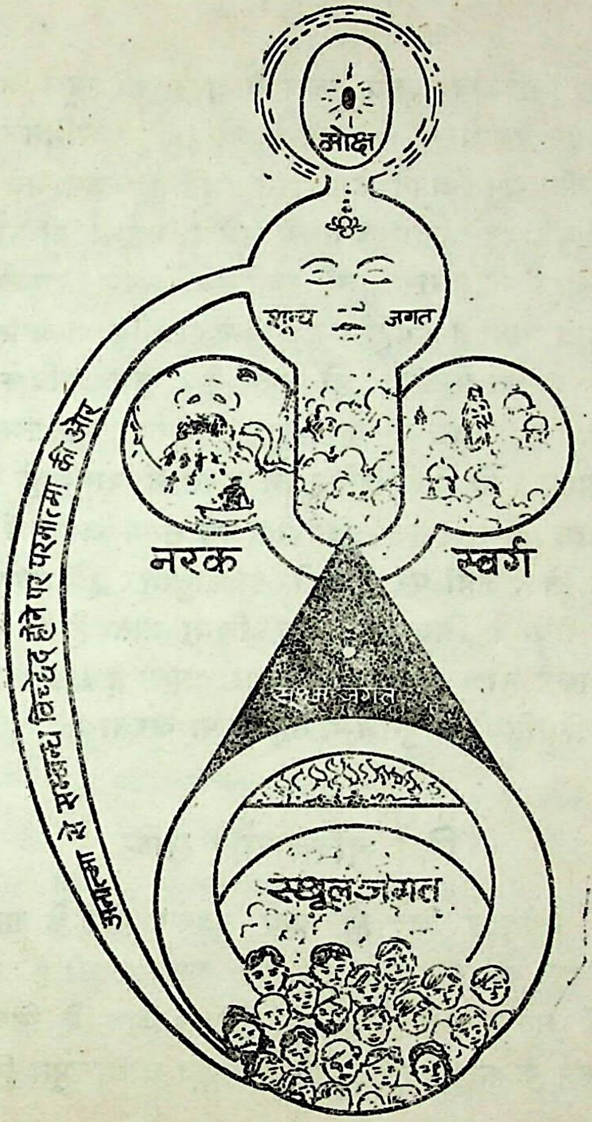
भगवान सगुण भी हैं और निर्गुण भी हैं। इससे

भी बढ़कर वह गुणातीत भी हैं। जब सृष्टि का कर्त्ता सगुण रहता है तब परमात्मा कहलाता है। यही कर्त्ता जब निर्गुण होता है तब परब्रह्म कहलाता है। इसी भाँति से इसकी गुणातीत वाली भी एक अवस्था होती है जिसे कि श्रद्धा एवम विश्वास के द्वारा ही जाना जा सकता है।

परमात्मा और हमारी देह में कार्यरत आत्मा में कोई भी द्वेष भाव नहीं है परन्तु फिर भी हम लोग माया से मोहित होकर अनात्म में आसक्त हुये पड़े हैं। यही कारण है कि कण-कण में समाया हुआ भगवान भी हमें दृष्टिगोचर नहीं होता।

ज्ञान और अज्ञान के अंधेरों के मध्य जो भेद हैं उसे सामने दिए गये चक्र से समझा जा सकता है।

———


मोक्ष
शून्य जगत
नरक
स्वर्ग
स्थूल जगत
विच्छेद होने पर परमात्मा की ओर

पीछे दिए गये चित्र के अनुसार स्थूल जगत में हम सब प्राणी अनात्मा से मोहित हुए भ्रमित रहते हैं और अपने-अपने कर्म करते रहते हैं। कर्म भले हों या बुरे; हमें सूक्ष्म जगत में प्रवेश करना ही पड़ता है जहाँ पर हमारे लिये स्वर्ग या नरक का चयन किया जाता है। यहाँ तक आकर ही जीव की आत्मिक लीला का समापन हो जाता है। हम यदि स्थूल जगत में अनात्मा का साथ छोड़कर परमात्मा से लयबद्ध होते हैं तो हमें सूक्ष्म जगत में जाना ही नहीं पड़ता है। इसके विपरीत हम शून्य जगत में जा पहुँचते हैं जहाँ पर हमारी इच्छानुसार हमें भगवान की सेवा के लिए वहाँ रोक लिया जाता है या आगे भेजकर मोक्ष प्रदान कर दिया जाता है। इन दोनों ही स्थितियों में पुनर्जन्म नहीं हुआ करता।

शिव शक्ति और सृष्टि

भगवान शिव ही ब्रह्म स्वरूप होने के कारण निष्कल कहे गए हैं चूंकि यह रूपवान भी हैं अतः इन्हें सकल भी कहा जाता है। शिव के निष्कल स्वरूप के कारण ही इनकी पूजा का आधारभूत लिङ्ग

भी निष्कल है क्योंकि यह शिव भगवान के निराकार स्वरूप का प्रतीक है।

सारा चराचर जगत बिन्दु-नाद स्वरूप है। इस स्वरूप में जो बिन्दु है वह शक्ति है और जो नाद है वह शिव है। इस भांति से यह सम्पूर्ण सृष्टि शिव शक्ति स्वरूप ही है। नाद बिंदु का आधार है और जगत का आधार बिंदु है। यही बिंदु और नाद अर्थात शिव शक्ति सम्पूर्ण सृष्टि का आधार बने हुए हैं। चूंकि इस जगत में सभी कुछ बिंदु और नाद के कारण होता है अतः यह शिव स्वरूप है क्योंकि यह शिव ही सबका आधार एवम् सर्वत्र व्याप्त है। बिंदु देवी है और नाद शिव है अतः इन दोनों का संयुक्त रूप ही यथार्थ में शिवलिंग है।

यह चिह्न यदि विषय भोग का सूचक भी यदि माना जाये तो भी हमारा भगवान होता है क्योंकि हमारा जन्म किसी योनि द्वार से ही हुआ है और योनि ने हमें उपहार स्वरूप जगत को तभी भेंट किया था जब वह लिंग युक्त हुई थी। यह सत्य स्वीकार कर लेने में कोई बुराई नहीं है कि प्रत्येक जीव योनि एवं लिंग के सहयोग से ही जगत में अवतरित होता है। इसे यदि भगवान के रूप में पूजा

जाए तो मेरी समझ में यह कोई अपराध न होगा क्योंकि भगवान वही है जो सृष्टि का कारक है और हमारी सृष्टि हमारा जन्म ही तो है।

शिवलिंग परमानन्द का कारण है अतः आंतरिक आनन्द प्राप्त करने के लिए शिवलिंग को माता-पिता का स्वरूप मानते हुए इसके ऊपर श्रद्धा एवं विश्वास रखते हुए इसकी पूजा करनी चाहिए।

जब शिव आनन्दोन्मत्त होकर भगवती पार्वती के साथ नृत्य करते हैं तो सृष्टि एवं उसके पदार्थों की क्रमशः उत्पत्ति होने लगती है।

आकाश को लिंग रूपा एवं धरती को योनि रूपा भी माना जाता है।

जगत में देखें या अन्यत्र। यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि शक्ति सदा ही पुरुष की इच्छा से संयोग करती है। यही स्थिति जगत की सृष्टि की है।

शिव की इच्छा से ही पराशक्ति शिव के साथ संयोग करती है और सृष्टि का श्रीगणेश होता है। यह दोनों आनन्दोन्मत्त होकर नृत्य करते हैं और तब नाद की उत्पत्ति होती है। इसी नाद से बिंदु प्रकट होता है और इसी बिंदु से सदाशिव के रूप में शिव का प्रादुर्भाव होता है। इन्हीं सदाशिव से महेश्वर

प्रकट होते हैं और महेश्वर से प्रकट होती है विद्या। इसे सरस्वती कहते हैं। इसी क्रम से अनंत के समावेशानुसार माया ने काल, नियति, कला और विद्या की सृष्टि की। कला से राहु तथा पुरुष प्रकट होते हैं। इसी माया से त्रिगुणात्मिका अव्यक्त प्रकृति उत्पन्न होती है। चूँकि यह त्रिगुणात्मिका है अतः इससे तीन विशेष गुण पृथक-पृथक प्रकट होते हैं जिसे कि सत्व, रज एवं तम कहते हैं। इन्हीं तीनों गुणों में जब क्षोभ उत्पन्न होता है तब इनसे गुणेश नामक, तीन मूर्तियाँ प्रकट होती है। इसी क्रम में प्रादुर्भाव होता है। महत् आदि तत्वों का। इन्हीं तत्वों से शिवाज्ञा के कारण अण्ड-पिण्ड प्रकट होते हैं। इसी भाँति सृष्टि आगे बढ़ती रहती है।

इस जगत में शिव शक्ति उसी भाँति व्याप्त है जिस भाँति हमारी देह में अंतरात्मा व्याप्त है।

देवता और उनकी शक्तियाँ

कोई भी वाहन बिना चालक के नहीं चला करता इसी भाँति सृष्टि भी बिना कर्त्ता के नहीं चला करती। यह सम्पूर्ण स्थावर जङ्गम रूप जगत शक्ति-

मय है और यह शक्ति जिसे पराशक्ति कहा जाता है परमात्मा शिव की कला है। यह कला सर्वशक्तिमान प्रभु की इच्छा के अनुसार उससे संयुक्त होकर इस चराचर जगत की सृष्टि करती है। जिस भाँति माता-पिता के अभाव में शिशु का जन्म नहीं हो सकता इसी भाँति शक्ति और शक्तिमान के अभाव में सृष्टि नहीं हो सकती।

परमेश्वर शिव हैं और परमेश्वरी उनकी अर्द्धांगिनी शिवा हैं। सृष्टि चक्र को चलायमान रखने के लिए सृष्टिकर्त्ता शिव ही ब्रह्मा कहलाते हैं। जब यह ब्रह्मा कहलाते हैं तब इनकी शक्ति होती है ब्रह्माणी। शिव रुद्र हैं तो उनकी शक्ति रुद्राणी कहलाती है। यही शिव विश्वेश्वर देव विष्णु होते हैं तब उनकी शक्ति लक्ष्मी कहलाती है। भगवान शिव जब भास्कर बनते हैं तब उनकी शक्ति प्रभा बनती हैं। जब ये महेन्द्र बनते हैं तो इनकी शक्ति शची कहलाती है। जब ये अग्नि बनते हैं तब इनकी शक्ति स्वाहा कहलाती है। जब ये यम बनते है तब इनकी शक्ति यमप्रिया कहलाती है। इन्हीं को विशेष स्थितियों में निम्नलिखित शक्तियाँ प्रकट होती हैं जो स्वयं पार्वती ही हुआ करती हैं क्योंकि शेष सभी पुरुषाकार रूपों

थिं स्वयं भगवान शिव हुआ करते हैं ।

शिव	शक्ति
निऋति	नैऋति
वरुण	वारुणी
वायु	वायुप्रिया
यक्ष	ऋद्धि
चन्द्रमा	रोहिणी
ईशान	शिवा
कालाग्निरुद्र	कालान्तकप्रिया
पुरुष	शतरूपा
रुचि	आकूति
दक्ष	प्रसूति
भृगु	ख्याति
मारीचि	सम्भूति
अङ्गिरा	स्मृति
पुलस्त्य	प्रीति
पुलह	प्रिया
क्रतु	संनति
अत्रि	अनुसूया
कश्यप	अदिति
वसिष्ठ	अरुन्धति।

इस भाँति से अनन्त रूप प्रदर्शित करने वाले शिव अनन्त हैं और उनकी शक्ति अनन्ता है। अतः भगवान शिव ही सृष्टि के समस्त पुरुष हैं और देवी पार्वती ही सृष्टि की सम्पूर्ण स्त्रियाँ हैं। सम्भवतः इसी कारण विद्वान जन प्रशंसा से पूरित शब्दों के साथ निम्नलिखित पंक्तियाँ कह उठते हैं—

सर्व रूप मयं देवी।
सर्व देवी मयं जगत ॥
अतो अहम् विश्व रूपा।
त्वम् नमामि मातेश्वरी ॥

———

सृष्टि का आरम्भ और शक्ति

जब समस्त चराचर जगत में कुछ भी नहीं था, सर्वत्र अंधकार ही अंधकार था। न सूर्य के दर्शन होते थे और न ही चन्द्रमा के। किसी भी ग्रह न नक्षत्र का आभास तक नहीं था। न दिन होता था और न ही रात्रि होती थी। अग्नि, पृथ्वी, वायु तथा जल का भी अस्तित्व न था। अव्याकृत प्रकृति से रहित सर्वत्र सूनापन व्याप्त था। दिशाओं का ज्ञान न होता था।

शब्द और स्पर्श का अनुभव न था और रस का भी पूर्णतः अभाव था। गन्धरूपादि की अभिव्यक्ति नहीं थी। इस भाँति का सर्वत्र सन्नाटा और घोर अन्धकार व्याप्त था तब महेश्वर शिव के हृदय में सृष्टि का विचार अंकुरित होता है और स्वयं ही अव्यक्त से व्यक्त रूप में प्रकट होते हैं। उनके मन में सृष्टि की अभिलाषा जाग्रत हो जाने के कारण यह विचार जन्मता है कि मैं एक हूँ अनेक हो जाऊँ। तब देवताओं में सर्वप्रथम देवता वेदपति ब्रह्माजी का प्रादुर्भाव होता है। ब्रह्मा के उत्पन्न हो जाने पर उन्होंने अपने समक्ष खड़े शिव को देखा और शिव ने अपने 'अनेक' में से एक ब्रह्मा को देखा और उन्हें सृष्टि की रचना करने का कार्य सौंप दिया।

सृष्टि का कार्य सम्पादन करते समय ब्रह्मा ने अपने द्वारा केवल मानसपुत्र ही उत्पन्न किये क्योंकि वे चाहते थे कि मानसी सृष्टि ही की जाये। इस कार्य में वह असफल रहे क्योंकि उनके द्वारा उत्पन्न किये गये मानसीपुत्रों में प्रजा की वृद्धि की तरफ प्रवृत्ति ही नहीं होती थी। क्योंकि उनका विचार था सृष्टि जितनी ही बढ़ेगी, उतनी ही भगवान से दूरी भी बढ़ेगी अतः सनकादिकों को यह कार्य भाया नहीं और

नारद ने इसकी तरफ ध्यान नहीं लगाया।

ब्रह्मा का कार्य तो सृष्टि को बढ़ाना था अतः वह निरन्तर प्रयत्नशील रहे परन्तु जब सफल नहीं हुए तो वह तप को ही उचित जानकर तपस्या में निमग्न हो गये। इनकी इस दृढ़ प्रतिज्ञारूपी तपस्या को देख कर भगवान आशुतोष अत्यधिक प्रसन्न हुए और उन्होंने ब्रह्मा को अपने अर्द्ध नारीश्वर रूप में दर्शन प्रदान किये। शिव के आधे हिस्से को स्त्रीमयी देखकर ब्रह्मा अचरज में पड़ गये परन्तु शीघ्र ही वास्तविकता समझ-कर उनकी स्तुति करने लगे। स्त्री रूप में शिव द्वारा प्रश्न किये जाने पर उन्होंने बताया कि इस सृष्टि का बारम्बार निर्माण किये जाने पर भी यह सृष्टि बढ़ती नहीं है अतः मैं मानसिक सृष्टि रोक करके मैथुनी सृष्टि का शुभारम्भ करना चाहता हूँ। अभी तक आपने अपने स्त्रीरूपा सृष्टि का शुभारम्भ नहीं किया अतः यह कार्य मुझसे सम्पन्न नहीं हो पा रहा है चूंकि अन्य कोई स्त्री नहीं है और मैथुन सृष्टि का सम्पादन करना है अतः आपसे निवेदन है कि आप मेरे मानसीपुत्र दक्ष की पुत्री बनें।

इसके बाद ब्रह्मा को मैथुनी सृष्टि की शक्ति प्राप्त

हुई और उसी समय से इस जगत में स्त्री से सम्बन्ध का शुभारम्भ हुआ ।

विश्वास एवं शक्ति

किसी भी बात का परिचय हमें इतिहास तथा पुराणादि से प्राप्त होता है । भ्रमित हुआ हृदय प्रत्येक रहस्य को स्वीकार नहीं कर पाता जिस कारण संदेह (शंका) का अंकुरण हो जाता है । आज कलियुग में यदि मानव को कुछ मिला है तो वह कल्कि महाराज की कृपा से शंका ही मिली है और इसी कारण हम लक्ष्य की तरफ अग्रसर नहीं हो पाते जबकि माता की कोख से उत्पन्न होकर धरती की गोद में समाने तक हमें यही मूल मन्त्र क्रमशः प्रभावित करता है कि विश्वास से बड़ा शास्त्र कोई नहीं, विश्वास से बड़ा धन कोई नहीं तथा विश्वास से बड़ा सम्बन्ध कोई नहीं ।

एक भक्त था जो कि अनेकों वर्षों से मन्दिर में आकर भगवती देवी की वन्दना करता था परन्तु उसे प्राप्त कुछ भी नहीं हो रहा था । एक दिवस उसके हृदय में क्षोभ उत्पन्न हुआ और उसने देवी की वन्दना करनी बन्द कर दी ।

भगवती देवी के पार्श्व में ही शिव की मूर्ति स्थापित थी। उस भक्त ने शिवार्चन प्रारम्भ कर दिया। इस बात से किसी को भी कोई अन्तर नहीं पड़ता कि कौन किसकी पूजा अर्चना करता है और किसकी नहीं करता है। इसी भाँति देवताओं को भी इससे कुछ अन्तर नहीं पड़ता कि उसकी कोई पूजा करता है या नहीं। यह अवश्य है कि जिसकी पूजा की जा रही होती है वह सहायक तो अवश्य ही होता है।

उस भक्त के द्वारा वन्दना न किये जाने पर देवी को कोई अन्तर नहीं पड़ा परन्तु एक दिवस विशेष घटना हुई।

वह भक्त शिवार्चन करते हुए धूप निवेदित कर रहा था तब उसने देखा कि धूप का सुगन्धित धुआं देवी की प्रतिमा के मुखमण्डल की तरफ वायु प्रवाह के कारण जा रहा है। उससे यह सहनीय नहीं हुआ और उसने पास का लघु वस्त्र देवी के मुख पर डाल दिया और बोला—'देवी ! मैं तुम्हें इस धूप को ग्रहण न करने दूँगा।''

यह अज्ञानतावश की गई भूल एक अबोध शिशु की भाँति ही तो थी। परिणामस्वरूप तत्क्षण ही देवी

साक्षात् प्रकट हो गई और उन्होंने प्यार से कहा— "तुम जब तक मुझे पाषाणमयी प्रतिमा समझकर मेरी वन्दना करते रहे तब तक मुझे तुम्हारी भावना के अनुसार पाषाण ही बने रहना पड़ा। आज तुम मेरा पाषाणमयी रूप भूल गये जिस कारण मैं भी प्रत्यक्ष हो गई हूँ।"

अतः हमें उस परम पिता परमेश्वर में विश्वास करना चाहिए कि वह सर्वत्र व्याप्त है। जिस भाँति से जल केवल जल ही है परन्तु उसे पीने से तृप्ति हुआ करती है। जिस भाँति अन्न केवल अन्न ही है परन्तु उसका सेवन करने से क्षुधा पूर्ति होकर शारीरिक बल वीर्य की पुष्टि होती है। इसी भाँति शिलाखण्ड पर उत्कीर्ण की गई देव प्रतिमा केवल प्रतिमा ही है परन्तु उसकी पूजा अर्चना करने से आत्मिक सन्तुष्टि प्राप्त हुआ करती है।

हमारे भ्रम और शक्ति

हमारे उपास्य देवी देवताओं के नाम, उनके रूप तथा उनके श्री विग्रह अपार और असंख्य हैं। यही कारण हमारे गम्भीर उपासनाओं के रहस्य में समाया

हुआ है। शिव को मानने वाले शैव कहलाते हैं। विष्णु को मानने वाले वैष्णव कहलाते हैं और शक्ति को मानने वाले शाक्त कहलाते हैं जबकि शिव के आधे अङ्ग में तथा विष्णु के पाँव के पास उनकी शक्ति-सर्वदा स्थित रहती है।

पूर्व जन्मों के संस्कार, देश, काल, समाज तथा परिस्थितियों के प्रभावस्वरूप सभीमें उपासना विषयक विषमता उत्पन्न हो जाती है। इसी कारण श्री भगवान के विग्रह भी एक से अनेक हो जाते हैं। सम्भवतः यही भय सनकादिकों को प्रतीत हुआ होगा और उन्होंने मानसिक सृष्टि में भी ब्रह्मा का साथ नहीं दिया था। एक वस्तु की अनेकता ही तो उसे दृष्टि से दूर कर देती है और इसी कारण हम एकेश्वरवादी होते हुये भी एक ईश्वर से परिचित नहीं हैं।

परम पिता परमेश्वर ने सृष्टि करते करते यह स्थिति ला दी कि सृष्टि की रचना करने वाले ब्रह्मा भी एक बार आश्चर्यचकित रह गये।

एक बार ब्रह्मा की अभिलाषा हुई कि चलो द्वारिका चलते हैं और कृष्ण से मिलकर आते हैं। यह विचार करके वह द्वारिकापुरी जा पहुँचे। द्वारपाल ने

उनका परिचय प्राप्त किया और राजमहल में जाकर श्री कृष्ण से कहा कि ब्रह्माजी आये हैं।

श्री कृष्ण ने सुना और कुछ विचार करके द्वारपाल से कहा कि जाओ और उनसे जाकर यह पता लगाओ कि कौन से ब्रह्मा आए हैं ?

द्वारपाल ने जब यही प्रश्न ब्रह्मा से किया तो वह चकरा गये। ब्रह्माण्ड के चतुर्मुखी ब्रह्मा इस बात का क्या उत्तर देते कि वह कौन से ब्रह्मा हैं। तथापि वह विचारमग्न हो गये कि दूसरा ब्रह्मा कौन है।

कुछ क्षणोपरान्त ब्रह्मा ने कहा—कि समाचार दे दो कि सृष्टि कर्ता ब्रह्मा आये हैं।

द्वारपाल से सन्देश पाकर श्रीकृष्ण ने स्वयं उनका अतिथि सत्कार किया। यहां पर ब्रह्मा ने पूछा कि यह बताइये मेरे अतिरिक्त और दूसरा ब्रह्मा कौन है ?

ब्रह्मा के प्रश्न को सुनकर श्री कृष्ण ध्यानमग्न हो गये और उसी क्षण वहाँ अगणित ब्रह्मा आकर एकत्र हो गये जिन्हें देख कर ब्रह्मा आश्चर्य में डूब गये और श्रीकृष्ण के चरणों पर गिर पड़े।

श्री कृष्ण ने उन्हें स्नेह से उठाया और समझाया—

"हे ब्रह्म देव। इस समूचे ब्रह्माण्ड का विस्तार पचास करोड़ योजन है और इसी ब्रह्माण्ड में आप सृष्टि कर्त्ता चतुर्मुखी ब्रह्मा हैं। निवेदन है कि इस ब्रह्माण्ड के अतिरिक्त भी अनेकों ब्रह्माण्ड हैं जोकि कई सौ करोड़ योजन विस्तार वाले हैं। उनमें से कई सौ करोड़, कोई हजार करोड़, कोई लक्ष योजन विस्तार वाले हैं। इन सभी ब्रह्माण्डों के अनुरूप ही अलग-अलग उनके ब्रह्मा भी हैं जोकि अपने-अपने ब्रह्माण्डों के अनुरूप ही अनेक मुखों वाले हैं।

सर्वशक्तिमान परमात्मा की शक्ति असीमित है इसी कारण उसका माप हो पाना असम्भव है। वह अनन्त हैं क्योंकि उसने अनेकों ब्रह्माण्डों की रचना की और प्रत्येक ब्रह्माण्ड के भिन्न-भिन्न ब्रह्मा, विष्णु, महेश बनाये। प्रत्येक ब्रह्मा को सृष्टि करने का आदेश देकर पुनः पुनः अपने कार्य को बढ़ाता रहता है। इसके बाद ब्रह्मा सृष्टि की रचना में तल्लीन हो जाते हैं और जितनी शक्ति का व्यय सृष्टि निर्माण में करते हैं वह तो उस सर्वशक्तिमान परमात्मा की शक्ति का स्वल्प अंश मात्र ही होती है। एक बीज को देख करके उसकी शक्ति का अनुभव करना प्रायः असम्भव ही होता है। जबकि उसी बीज में एक विशाल वृक्ष अपने पत्तों,

फूलों और फलों सहित गुप्तरूपेण समाया रहता है जो समयानुसार अंकुरित होकर अपना परिचय देता है। इसी रहस्य को सार रूप से कहा जाये तो बीज में अनन्त शक्ति भरी रहती है।

शक्तिमान और शक्ति

भगवान अपरिमाणी, अव्ययी, अविनाशी होते हुये भी जब सृष्टि में रचना, स्थिति तथा संहार का कार्य करते हैं तो वह सर्वशक्तिमान कहलाते हैं। शक्ति कभी भी शक्तिमान से भिन्न नहीं हुआ करती और न ही वह शक्तिमान से पृथक ही हुआ करती है जबकि किया जाने वाला सर्व कार्य शक्ति की ही क्रिया के प्रभाव से हुआ करता है।

एक बार शंकराचार्य अस्वस्थ होकर गंगा किनारे लेटे हुए थे। इन्हें अत्यधिक प्यास लगी हुई थी परन्तु देह स्वस्थ न होने के कारण वह उठकर घाट से जल ग्रहण न कर सकते थे। ऐसी स्थिति में एक स्त्री को वहाँ से जाते हुए देखकर उन्होंने उसे पुकारा और कहा कि मुझे प्यास लगी है। कृपया घाट से जल लेकर मुझे पिला दीजिये।

यह शब्द श्रवण करके वह स्त्री बोली—"भगवन्! आप गंगा किनारे पर ही तो स्थित हैं अतः उठिये और स्वयं जल ग्रहण कर लीजिए।"

शंकराचार्य ने स्पष्ट कहा—'मैं अस्वस्थ हूँ जिस कारण मुझमें उठ करके घाट तक जाकर जल ग्रहण करने की शक्ति नहीं रही है।'

यह सुनकर वह स्त्री अट्टहास कर उठी और प्यार से बोली—'आप तो अद्वैतवादी हैं। आप तो शक्ति का खण्डन करते हैं फिर क्यों कहते हैं कि मुझमें शक्ति नहीं रही।'

इन शब्दों को सुनकर वह चौंके और उन्होंने जब उस स्त्री को ध्यान से देखा तो वह स्त्री साक्षात् महामाया दिखाई दी। उन्होंने तत्काल प्रणाम किया और इसी घटना से सौंदर्य लहरी का सूत्रपात हुआ।

उपरोक्त कथानक से यह स्पष्ट हो जाता है कि शक्ति के बिना सभी अशक्त हैं अर्थात शक्ति ही सबकी सामर्थ्य है। शक्ति समस्त चराचर जगत का कारण है फिर भी शिव के आधीन है क्योंकि शक्तिमान की शक्ति शक्तिमान की अभिलाषा के अनुसार कार्यरत हुआ करती है।

शक्ति के विभिन्न रूप

परब्रह्म परमात्मा की आदि शक्ति उमा देवी है। ये ही परा शक्ति हैं जोकि त्रिलोकी को उत्पन्न करती हैं। यह देवी दो विभिन्न रूपों में अवतरित हुई थी, प्रथम दक्षपुत्री सती के रूप में और द्वितीय हिम ललना पार्वती के रूप में। इनका यह प्रादुर्भाव शिव के लिए ही हुआ था। जब-जब शिव विभिन्न विशेष कारणों के परिणामस्वरूप अवतरित होते हैं तब-तब इनकी यह शक्ति भी अपने विभिन्न रूपों में अवतरित होती है। शिवजी सर्वप्रथम महाकाल के रूप में अवतरित होते हैं तो इनकी शक्ति महाकाली होती है। द्वितीय अवतार तार के रूप में लेते हैं तो इनकी शक्ति तारा होती है। इनका तृतीय अवतार बाल भुवनेश के रूप में होता है तब इनकी शक्ति भुवनेश्वरी कहलाती है। इनका चतुर्थ अवतार षोड़श के रूप में होता है तो इनकी शक्ति षोड़शी कहलाती है। जब यह पंचम अवतार के रूप में अवतरित होते हैं तब भैरव कहलाते हैं और इनकी शक्ति भैरवी कहलाती है। इसी भाँति शिवजी का छठवाँ अवतार छिन्नमस्तक के रूप में होता है तब इनकी शक्ति छिन्नमस्तिका कहलाती है। इनका सातवाँ अवतार धूमवान के रूप

में होता है तब इनकी शक्ति धूमावती कहलाती है। आठवीं बार अवतार लेने पर यह बगलामुख कहलाते हैं और इनकी शक्ति बगलामुखी कहलाती है। नौवीं बार ये मातङ्ग के रूप में अवतरित होते हैं तब इनकी शक्ति मातङ्गी कहलाती है। भगवान शिव दसवीं बार अवतार लेकर कमल कहलाते हैं और इनकी शक्ति कमला कहलाती है।

इस भाँति से शिव की शक्ति जब अवतरित होती है तो दस महाविद्या के नाम से जानी जाती है। इन विद्याओं की बड़ी ही अद्भुत महिमा है।

शक्ति का खेल

इस भाँति से शक्ति सम्बन्धी असंख्य प्रमाण हैं जिनसे देवी का निर्गुण परब्रह्मस्वरूप स्पष्ट होता है जिसे देखकर सहज ही यह विश्वास होता है कि सगुण निराकार सृष्टिकर्ता वह स्वयं है क्योंकि वह शक्ति है और शक्ति के बिना शिव भी शव बन जाता है।

एक बार शिवजी बैठे हुए थे और बाहर से घूम-कर उनकी शक्ति आई। उसने पीछे से शिवजी के दोनों नेत्र अपनी हथेली से ढक लिए। इस भाँति के

खेल आज भी लोग परस्पर किया करते हैं। यह क्रिया देवी के द्वारा कोई खेल स्वरूप न थी बल्कि अदृश्य रूप में शक्ति सम्बन्धी कोई गुप्त सन्देश था जिसे शक्ति को रखने वाला शिव भी समझ नहीं सका। नेत्रों के बन्द होते ही सृष्टि में हाहाकार मच गया। सर्वत्र अन्धकार व्याप्त हो गया क्योंकि सृष्टि के कर्ता की आँखें ढक गई थीं। यह स्थिति देखकर भोले भंडारी भी असमंजस में पड़ गये। कुछ समयोपरान्त शक्ति ने स्वयं ही अपनी हथेलियाँ हटायीं तो सृष्टि को पुनः उजाला प्राप्त हुआ।

नौ देवियाँ, दशमहाविद्या, तीन महाशक्तियाँ

यह देवी अपने असंख्य रूपों के द्वारा भाँति-भाँति की लीला प्रस्तुत करती रहती हैं और सर्वदा शिव की अर्द्धांगी बनी रहती हैं।

शिव की शक्ति विभिन्न रूपों के द्वारा जानी जाती हैं जिसमें से सर्वप्रथम उसका नौ दुर्गावाला रूप है। जब यह शक्ति नौ दुर्गा कहलाती है तो इसके निम्नलिखित नाम होते हैं—

१. शैलपुत्री, २. ब्रह्मचारिणी,
३: चन्द्रघण्टा, ४. कूष्माण्डा,

५. स्कन्दमाता, ६. कात्यायनी,
७. कालरात्रि, ८. महागौरी तथा
९. सिद्धिदात्री।

पूर्वोक्त वर्णन की भाँति जब यह शक्ति दस महाविद्या बनती है तब निम्नलिखित नामों से अपना स्वतंत्र परिचय प्रदान करती है—

१. काली,
२. तारा,
३. षोड़शी (त्रिपुर सुन्दरी),
४. भुवनेश्वरी (राजराजेश्वरी, ललिता)
५. छिन्नमस्ता,
६. भैरवी (त्रिपुर भैरवी)
७. धूमावती (अलक्ष्मी),
८. बगलामुखी,
९. मातङ्गी तथा
१०. कमला (लक्ष्मी)।

सम्पूर्ण देवताओं की शक्ति बनकर जो शक्ति अवतरित हुआ करती है तथा जिसने अपने कारण अपने आप में ही इस चराचर जगत को व्याप्त कर रखा हैं जो आदि शक्ति है, जिसका विचार हम पुस्तक के अन्तिम चरण में करेंगे। यहाँ पर यह स्पष्ट करना

है कि यह आदि शक्ति तीन महाशक्तियों के रूप में प्रधानतः मानी जाती हैं जो निम्नलिखित हैं—

१. महाकाली,

२. महासरस्वती तथा

३. महालक्ष्मी।

शक्ति की सर्वव्यापकता

सामान्यतः प्रत्येक साधक अपने हृदय में पूर्ण आस्था का दीप प्रज्वलित करके अपने इष्टदेव को ही सर्वश्रेष्ठ एवम् परब्रह्मस्वरूप मानता है। ऐसा विश्वास करना उचित भी है परन्तु सूर्य की शक्ति में विश्वास न करने वाले साधक सूर्य की रोशनी तथा तपिश में कभी भी सन्देह नहीं कर सकते।

शक्ति तत्त्व अद्वितीय तथा अखण्ड है। इसके पास किसी भी भाँति के देश, काल, समाज, समय तथा वस्तुजनित भेद का कोई भी अन्तर नहीं पड़ता। इसके लिए कोई भी सजातीय या विजातीय नहीं है। यही कारण है कि जल सभी की प्यास बुझाता है। अंकुर से बीज, अग्नि में ज्वाला, तरलत्व में जल, आकाश में अवकाश, धृति, कीर्ति, बुद्धि, श्री, स्मृति, श्रद्धा, मेधा, दया, लज्जा, सुधा, तृष्णा, क्षमा, कान्ति,

ह्रीं, वाक रूपी शक्ति इस सृष्टि में सर्वत्र व्याप्त है। इस भाँति से यह तथ्य समझ में आता है कि सर्वशक्तिमान देवता भी इसी शक्ति से संचालित हैं। यही कारण है एवम् व्यापकता, प्रभाव तथा सुगमता के कारण सृष्टि में देवों की अपेक्षा शक्ति की उपासना विशेष फलवती मानी गई है।

शिव अपनी शक्ति से युक्त होकर ही सृजन, पालन तथा संहार के कार्य में समर्थ हुआ करता है। जब यह शक्ति रहित होते हैं तो स्पन्दन भी नहीं कर पाते। सृष्टि में कोई भी कार्य बिना शक्ति के सम्पन्न नहीं हुआ करता। ईश्वर, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, राम, कृष्णादि की सभी गतिविधियों, क्रियाओं तथा उनकी सफलताओं को देखा जाये तो सभी का कारण उनकी शक्तियाँ अर्थात माया, सरस्वती, लक्ष्मी, पार्वती, सीता एवं राधा ही हैं।

मूलतः शक्ति एक ही है जोकि अपने भक्तों की भक्ति से प्रसन्न होकर उसके ईष्टदेव की शक्ति के रूप में प्रस्तुत होती है। शास्त्रों में सरस्वती को वाक् शक्ति, लक्ष्मी को सौभाग्य शक्ति माना गया है। माया ब्रह्म तथा प्रकृति पुरुष की भावना ही अर्द्धनारीश्वर के रूप में विद्यमान है।

पंच तत्व और शक्ति

परम्परा से प्राप्त हुए हमें हमारे धार्मिक कृत्यों में शक्ति का महत्व अधिक बताया गया है। सारे संसार में किसी न किसी रूप के द्वारा शक्ति को माना जाता रहा है। आज के आधुनिक काल में वैज्ञानिक जिसे इनर्जी, नेचर, पावरादि के नाम से पुकारते हैं वह शक्ति के सिवा और कुछ भी नहीं है। यह शक्ति दो भागों में विभक्त होकर प्रस्तुत होती है जोकि बहिर्मुखी तथा अन्तर्मुखी होती है। बहिर्मुखी शक्ति स्वभावतः दर्शित हुआ करती है परन्तु अन्तर्मुखी शक्ति किसी विशेष प्रयोग आदि के द्वारा ही जानी जा सकती है।

यह शक्ति ही है कि उसके बिना कोई भी पुरुषार्थ सफल नहीं हो पाता। आज आधुनिक वैज्ञानिक जिसे अणु-परमाणु कहते हैं वह आधिदैविक शक्ति ही है। यही शक्ति प्रत्येक पुञ्ज का संचालन करती है और जिसकी संचालक बनती है उसका धर्म कहलाती है क्योंकि यह आत्मा में केन्द्रित हुआ करती है। मूलतः जिस वस्तु की जो शक्ति है वह उसका धर्म हो जाती है।

शक्ति के विषय में और इसकी व्यापकता के

विषय में कहीं पर भी साहित्य और विचार शैली का अभाव नहीं है।

हिन्दू धर्म में अनेक देवों के होते हुये भी पंच देवों की उपासना मुख्यतः कही गई है। यह पंच देव गणेश, शिव, विष्णु, सूर्य और शक्ति कहलाते हैं। इन पंच देवों का सम्बन्ध पाँच तत्वों से स्थापित किया जाता है और पाँच तत्व कहते हैं जल, अग्नि, पृथ्वी, वायु तथा आकाश को। इस भाँति से यह माना जाता है कि विष्णु आकाश के स्वामी हैं, शिव पृथ्वी के स्वामी हैं, सूर्य, वायु के स्वामी हैं, गणेश जल के स्वामी हैं और शक्ति अग्नि की स्वामी हैं।

जगत में प्रचलित इन सभी देवों में जो भी मुख्य विशेषता मानी जाती है वह निम्नलिखित है—

ब्रह्मा सृष्टि करते हैं।
विष्णु पालन करते हैं।
शिव संहार करते हैं।
सूर्य उजाला देते हैं।
अग्नि ऊर्जा देती है।

यह सर्व गुण इनके द्वारा सम्पन्न होते हैं परन्तु यदि इनमें शक्ति नहीं तो यह उपरोक्त गुण कैसे प्रस्तुत करेंगे और किया जाने वाला कार्य गुण कैसे ग्रहण

करेगा। मूलतः किसी भी कार्य में पाया जाने वाला गुण शक्ति हुआ करता है अतः उपरोक्त विशेषतायें निम्नलिखित गुणवाचक शक्ति के कारण होती हैं क्योंकि—

ब्रह्मा में सृष्टि करने की 'शक्ति' है तभी वह जगत की रचना करते हैं।

विष्णु में सृष्टि को चलायमान रखने की 'शक्ति' है तभी तो वह जगत को क्रियाशील रख पाते हैं।

शिव में सृष्टि का संहार करने की 'शक्ति' है तभी तो वह संहार करने के कारण महाकाल कहलाते हैं।

सूर्य में उजाला प्रदान करने की 'शक्ति' है तभी तो वह पूर्व में उदय होकर रात्रि के अन्धकार का हृदय बेध देते हैं।

अग्नि में दाह की 'शक्ति' है जोकि तपिश कहलाती है। इसी शक्ति के कारण अपने प्रभाव क्षेत्र में आने वाली समस्त सामग्री को स्वाहा कर देती है।

इस भाँति से शक्ति की व्यापकता पूर्णतः स्पष्ट हो जाती है।

भगवान और शक्ति

हम प्रतिदिन जाने या अनजाने भगवान शब्द का उच्चारण प्रायः कर दिया करते हैं। अतः हमारे लिए यह रहस्य जानना अत्यधिक आवश्यक हो जाता है कि भगवान शब्द का अर्थ क्या है ? यह किससे सम्बन्धित है ?

भगवान ?

भग + वान = भगवान ।

संस्कृत में भग कहते हैं योनि को। वान का शब्दार्थ वाहन से लगाया जाता है परन्तु यह उचित न होगा क्योंकि वाहन भी संज्ञा सूचक शब्द है।

यह बात तो सदा स्मरण रखनी होगी कि भगवान शब्द संस्कृत का शब्द है। इस शब्द में प्रत्यय के रूप में 'वान' का प्रयोग होता है। इस प्रयोग के द्वारा संज्ञा को विशेषण में परिवर्तित किया जाता है जैसे कि दया करने वाला व्यक्ति दयावान, धनवाला व्यक्ति धनवान और बल रखने वाला व्यक्ति बलवान कहलाता है। इसी भाँति से भग अर्थात योनि रखने वाला व्यक्ति भगवान कहलाता है।

भगवान शब्द पुरुषवाचक होने के कारण योनि वाला नहीं हो सकता क्योंकि योनि रखने वाली देह

स्त्रीवाचक हो जाती है जिसे कि भगवान नहीं कहा जा सकेगा। अब फिर विचार करने पर तथ्य यह निकलता है कि जो पुरुष योनि रखे वह भगवान कहलायेगा परन्तु उसे लिङ्ग भी रखना होगा तभी वह पुरुषवाची शब्द भगवान प्रमाणित होगा। इस भांति से समस्त ग्रन्थों का अवलोकन करने पर हमारी दृष्टि शिव पर केन्द्रित हो जाती है क्योंकि वह अर्द्ध नारीश्वर रूप में प्रकट होकर अपनी आधी देह में लिङ्ग रखते हैं तो शेष आधी देह में योनि भी रखते हैं अतः योनि और लिंग एक साथ ही अपनी देह पर धारण करने के कारण शिव ही भगवान कहलाते हैं। मूलतः यही रहस्य समाया है शिव के अर्द्धनारीश्वर वाले रूप में। अतः जब हम भगवान-भगवान कह कर पुकारते हैं तो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष भावना से हम शिव-शक्ति को एक साथ ही पुकारते हैं।

ईश्वर और शक्ति

जब से सृष्टि का निर्माण हुआ तभी से जीव ने प्रत्येक रहस्य को समझने का वस्तुतः प्रयास किया और क्रमशः ज्ञान प्राप्त करता चला गया। ज्ञान प्राप्त

होने पर सहज ही प्रत्येक विषय की आलोचना का भी इसने स्वयं में साहस पाया और इसने बहुत कुछ लिखा, बहुत कुछ कहा। यही कारण हुआ है कि हम एकेश्वर-वादी होते हुये भी अनेकता में फँसे हुये हैं।

ज्ञान सभी को है क्योंकि सभी ने शिक्षा प्राप्त की है परन्तु जिसे ज्ञान कहते हैं वह किसके आँचल में आया है ? भला कौन अनुमान लगा सकता है।

आज हम परमपिता परमेश्वर के प्रति समर्पण का भाव रखते हुए भी भला उसे कहाँ जानते हैं ? जब हम परमेश्वर को नहीं जानते तो उसकी शक्ति को कैसे पहचानेंगे।

जगत के सृष्टिकर्ता परमेश्वर का ऐश्वर्य अनन्त है। उसी ऐश्वर्य के लघुतम अंश का परिणाम यह जगत है। इस जगत में अनेकों कर्ता और उनकी शक्तियाँ हैं। यह सभी ईश्वर से अभिन्न तथा एकीभूत हैं।

हम सृष्टि के कर्ता को ईश्वर कहते हैं। इस सम्बोधन में प्रथम शब्द ई है। इस ई शब्द का प्रयोग किसी संज्ञा को 'वाला' अर्थ प्रदान करके विशेषण बनाने के लिए करते हैं। इस भाँति से ई+श्वर= ईश्वर होता है। अतः जो स्वर को अर्थात साँसों की

प्रक्रिया को संचालित करता है वह ईश्वर कहलाता है।

यह ईश्वर किसी के आधीन नहीं है बल्कि हम मानें या न मानें हम ही उसके आधीन हैं। हम पढ़ लिख कर ऐसे बन गये हैं कि बिना प्रत्यक्ष प्रमाण के हम कुछ स्वीकार नहीं कर पाते। इसके लिए ईश्वर ने अनेकों प्रमाण सृष्टि में चारों तरफ प्रदर्शित कर रखे हैं कि हम उसके रहस्यवाद को समझकर उसमें विश्वास कर लें परन्तु हम ऐसा नहीं करते क्योंकि हमें सुलझा हुआ सूत्र चाहिये। हमें पढ़ा दिया गया कि १ और १ मिलकर दो होते हैं जबकि १ और १ मिलकर ११ भी हुआ करते हैं।

प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता नहीं हुआ करती। यदि हम प्रकाश को ही देखें तो उसमें दो गुण मिलते हैं उजाला और अंधेरा। इसे ही भाव तथा अभाव कहते हैं। जगत में कार्यरत कोई भी शक्ति अपना विशेष स्वभाव रखती है। इसी भाँति प्रकाश का भाव वाला भाव प्रकाशित करने का है और अभाव वाला भाव आधीन रहने का है। यह दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। वस्तुतः भाव ग्राहक है और अभाव ग्राह्य है। यह दोनों उभयात्मक होते हैं

अर्थात एक होता है प्रमाता तो दूसरा होता है प्रमेय। इन्हीं दोनों के मध्य से उभरता है प्रमाण। इस समूची सृष्टि में यही क्रम क्रमशः कार्यरत है।

सर्वशक्ति मान और शक्ति

शिव सर्वशक्तिमान है। शक्तिमान उसे कहते हैं जो कि शक्तिमय हुआ करता है। इस शब्द में मान प्रत्यय है जो कि कार्य के सुचारू रूप से चलते रहने की स्थिति को विशेषण बनाने के लिये प्रयुक्त होता है। इस भाँति यह प्रमाणित होता है कि जिसके आधीन शक्ति होती है वह शक्तिमान कहलाता है। चूंकि शिव में अनन्त शक्तियाँ हैं अतः वह सर्व शक्तिमान कहलाता है।

हमारे शरीरों में निवास करने वाली आत्मायें दृष्टिगोचर होने वाला विश्व उनका शरीर है तभी तो शिवजी समुद्र मंथन से प्राप्त होने वाले तीव्र हलाहल को पीते हैं तो कण्ठ में ही रोक लेते हैं। तभी तो भगवती पार्वती जब उनके नेत्र बन्द कर लेती हैं तो समूचा विश्व अन्धकारमय हो जाता है। सृष्टि के शुभारम्भ के समय जब शिव की अभिलाषा

होती है कि सृष्टि बनायी जाये तब उनकी इच्छा शक्ति के संकोच से स्वात्मस्वरूप भिन्न रूप से विश्व का अभ्युदय होता है तो ग्राहक और ग्राह्य एक दूसरे से विभक्त होकर प्रकाश में आते हैं।

शिव परमेश्वर है परन्तु यह परमेश्वर भी शक्ति के अभाव में केवल शव मात्र है जबकि यथार्थ में शिव कभी भी शक्तिहीन नहीं हुआ करता। शिव शक्ति का पारस्परिक सम्बन्ध पूर्णतः साक्षात् है।

काल चक्र और शक्ति

सृष्टि को सुचारू रूप से चलायमान रखने में योगदान देने के हेतु जगत में आने वाला प्रत्येक जीव शिव शक्ति का स्वतन्त्र प्रमाण है तो जगत में संहार रूपी मृत्यु के कारण सृष्टि से जाने वाला जीव भी शिव शक्ति का ज्वलन्त उदाहरण है।

यह प्रत्यक्ष है और हम सभी जानते हैं कि सृष्टि चक्र यदि चलायमान है तो संहार चक्र भी अपनी द्रुत गति से कार्यरत है। अनादिकाल से सृष्टि होती आ रही है और अनादिकाल से ही संहार होता आ रहा है।

हम जब अनादिकाल कहते हैं तो इसका अर्थ यही होता है कि जिसकी गणना न हो सके।

सृष्टि और संहार अनादिकाल से निरवच्छिन्न अप्रहित गति से निरन्तर भ्रमणशील है और भविष्य में भी यह निरन्तर भ्रमण करता रहेगा क्योंकि इसकी असीम शक्ति का अधिष्ठाता शिव है। इसके प्रभाव से कोई नहीं बच पाता। सम्पूर्ण स्थावर जङ्गम प्राणियों के जन्म, वृद्धि और मरण इसी के कारण होते हैं क्योंकि जन्म ही तो सृष्टि की रचना है, वृद्धि ही तो सृष्टि का पालन है और मरण ही तो सृष्टि का संहार है। इसी को काल चक्र भी कहते हैं क्योंकि काल ही कल का परिवर्तन करता है।

कल होने वाली घटना को करने वाली शक्ति को काल कहते हैं। कल शब्द में 'आ' प्रत्यय का प्रयोग कल को भाववाचक संज्ञा बनाने के लिये प्रयुक्त होकर कल का काल हो जाता है। यह काल मृत्यु-स्वरूप है और संहार का स्पष्ट अर्थ मृत्यु ही होता है।

काल का कर्ता शिव है और यह सदा अजेय है। किसी भी अनन्य साधनों से यह परास्त नहीं होता। भृगु ऋषि के द्वारा यदि असुरों को पुनः जीवन यापन

का अवसर मिलता है तो इसी काल की कृपा से । महात्मा मार्कण्डेय यदि अपनी लघु आयु को काल से बढ़वा लेते हैं तो यह काल की केवल लीला है जो कि यह प्रमाणित करने के लिये है कि यदि किसी को काल से कोई बचा सकता है तो वह केवल स्वयं काल ही है और काल का वास्तविक स्वरूप शिव शक्ति ही है । यह अत्यधिक बलवान है, अजेय है, पराक्रमी है और किसी की भी कुछ भी नहीं सुनता । यही तो अनन्तकाल से इस अनन्त विश्व का संहार करके खाता चला आ रहा है ।

यही काल प्रत्यय 'आ' के अभाव में कल बन जाता है जो कि भूत कहलाता है । 'ई' के अभाव में शिव शव बन जाता है ।

शिव शक्ति

शिव-शक्ति एक सामासिक पद है जो कि एक दूसरे को एक दूसरे का पूरक प्रमाणित करता है। इस स्थिति में शिव सर्वदा शिव रहता है कभी भी शव नहीं बनता।

शिव और शक्ति समास विग्रह हैं जो कि एक दूसरे को एक दूसरे से अलग दर्शाते हैं। ऐसी स्थिति में शिव शव बन जाता है क्योंकि उसके पास उसकी 'ई' नामक शक्ति नहीं रहती।

इसी भाँति से भगवान एक सामासिक पद है। भग+वान=भगवान अर्थात् भग वाला व्यक्ति पुरुष वाची होने के कारण उसके कभी भी भग अर्थात योनि नहीं हुआ करती। इस भाँति से भग का महत्व अधिक प्रकट होता है। भग स्त्रियों के होती है, पुरुषों के नहीं। भगवान पुरुष वाची शब्द है, स्त्री वाची नहीं। इस भाँति से जगत के आधार शिवजी अर्द्धनारीश्वर रूप में भगवान का परिचय देते हैं क्यों कि इसी पुरुष वाची देह में स्त्री भी है अर्थात् लिंग

भी है और योनि भी। अतः शिव ही भगवान होते हैं और अर्द्ध नारीश्वर रूप में सृष्टि की रचना, पालन तथा मारण करते रहते हैं। यही शिव शक्ति है परन्तु जब यह शक्ति शिव से विलग होती है तब कालिका का रहस्य साक्षात् हो उठता है। क्योंकि शिव सम्बोधन वाले शब्द में 'ई' शक्ति के रूप में प्रत्यय है जो कि गुण वाचक या सम्बन्ध वाचक होने के कारण जब शिव से अलग होता है तब शिव शव होकर गिर पड़ता है और आद्य शक्ति देवी कालिका उसके हृदय पर पाँव रख कर खड़ी हो जाती है और तीव्र अट्टहास कर उठती है क्योंकि जगत का नियन्ता सर्वेश्वर उसके पाँव के नीचे शव बन कर पड़ा हुआ होता है जिसके हृदय में स्पन्दन भी नहीं हुआ करता।

'काली' सम्बोधन वाले शब्द में दो प्रत्यय प्रयोग होते हैं। प्रथम प्रत्यय 'क' है जो कुछ 'करने वाला' भाव व्यक्त करता है। दूसरा प्रत्यय 'ई' है जो संज्ञा को विशेषण में परिवर्तित करता है इसभाँति से स्पष्ट होता है कि कल का कर्त्ता। यहाँ पर 'क' शब्द प्रत्यय है जो कि स्त्रीलिंग रूपक है अतः जो कल होने वाला है उसे करने वाला या करने वाली जो शक्ति

है वह 'काली' है। यही काली तो शिव की शक्ति है। जब शिव शव होकर निढाल हो जाता है तब उसकी शक्ति काली सर्वदा जाग्रत रहती है और प्रत्येक काल में कार्यरत रहते हुये अपने प्रभाव को स्पष्ट प्रदर्शित किया करती है। सम्भवतः यह भी कारण है कि यदि शिव को श्मशानवासी कहते हैं तो भगवती कालिका देवी को भी श्मशानवासिनी कहा जाता है। यदि शिव दिगम्बर हैं तो कालिका भी दिगम्बरा हैं। शिव के गले में यदि मुण्डमाला है तो कालिका देवी के गले में भी ताजा कटे हुये मुण्डों की माला शोभायमान होती है।

सर्वे भवन्तु सुखिनः।
सर्वे सन्तु निरामयाः॥
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु।
मा कश्चिद्दुःखभाग् भवेत्॥

———

लेखकीय परिचय

मन्दाकिनी तट पर बसे, मायापुरी में रहते हैं।
सेवा में हूँ तत्पर सदा, 'यशपाल' मुझको कहते हैं ॥

भागीरथी के तट पर एक औद्योगिक नगर है बसा।
जन्म लेकर कानपुर, हरिद्वार हूँ में जा बसा ॥

बस आपसे कुछ स्नेह है, कि कार्य ऐसे करता हूँ।
गुप्त विद्याओं से जुड़ा, मैं शोध कार्य करता हूँ ॥

अपना परिचय क्या कहूँ, किन शब्दों में सम्मान करूँ।
माँ जगदम्बे की कृपा है, मैं उसको ही बस 'माँ' कहूँ ॥

वह माँ सदा सहायी है, यह जग पर दुःखदायी है।
मैं आपकी सेवा कर रहा, आपमें बसी वह मायी है ॥

बस इतना परिचय मेरा है, बाकी तो रैन बसेरा है।
इस जग में आना-जाना तो,बस जोगी वाला फेरा है ॥

—यशपाल

नीति ग्रन्थों के अमृत कण

संग्रहकर्ता—बालकृष्ण मुजतर

धर्मशास्त्रों के चुने हुए उपयोगी अनमोल बोल, नीति ग्रन्थों में वर्णित सामान्य जीवन और व्यवहार के लिए मुख्य बात। जैसे—दिनचर्या, सभ्यता, घर की सफाई, स्वास्थ्य शिक्षा, सभा सम्मेलन, संभाषण, पारिवारिक कर्तव्य, वेशभूषा, आमोद-प्रमोद तथा अतिथि सत्कार आदि विषयों पर सुन्दर चयन।

सचित्र भर्तृहरि शतक

अनुवादक—पं० ज्वाला प्रसाद जी

भारत के इतिहास में महाराजा भर्तृहरि के नाम को कौन नहीं जानता? उन्हीं की यह महान रचना, जिसमें वैराग्य शतक, नीति शतक व शृंगार शतक तीनों को प्रस्तुत किया गया है। प्रत्येक शतक के साथ ८-८ चित्र हैं यानी कुल पुस्तक में दिए गये २४ चित्रों ने इस ग्रन्थ को रोचक भी बना दिया है। प्रत्येक श्लोक के साथ उसका सरल हिन्दी अनुवाद दिया गया है पुस्तक के प्रारम्भ में दी गई भर्तृहरि की जीवनी इसकी एक विशेषता है। बहुत ही सुन्दर छपाई और आकर्षक मुख पृष्ठ।

शिव भक्तों के लिए—

शिव उपासना

इस पुस्तक में शिव महिम्न स्तोत्र, शिव ताण्डव, शिव चालीसा, शिव स्तुति, शिवाष्टक, शिवस्तवन, शिव स्तोत्र, शिव नामावली, शिवध्यानम् महामृत्युंजय स्तोत्र व जपविधि, भजन और आरतियाँ दिए गए हैं।

श्रीमद् देवी भागवत पुराण

वेद व्यास जी द्वारा रचित अठारह पुराणों में देवी भागवत पुराण का विशेष महत्त्व है। माँ की अद्भुत लीलाओं का पूर्ण आनन्द प्राप्त करने के लिए यह ग्रन्थ सर्वोपरि है। संकट ग्रस्त व्यक्तियों के लिए इस महान ग्रन्थ का पाठ करना संकट से मुक्त कराता है। सम्पूर्ण ग्रंथ के पाठ को सुविधा के लिए नवाह्न पारायण के अनुसार २२ भागों में भी बाँट दिया गया है, इस प्रकार नवरात्रों में नवाह्न पारायण करने का अत्यधिक फल है। पुस्तक की भाषा बहुत सरल है ताकि कम पढ़े-लिखे, वृद्ध, स्त्रियाँ और बच्चे भी सुविधा से पढ़कर ज्ञान लाभकर सकें।

चाणक्य सूत्र संग्रह

कौटलीय अर्थशास्त्र का निचोड़

व्याख्याकार—स्व० श्री रामावतार विद्याभास्कर

इस व्याख्यायमान ग्रंथ में कौटलीय अर्थशास्त्र से चुने गये ५८३ सूत्रों को मूल संस्कृत व हिन्दी अनुवाद सहित प्रस्तुत किया गया है। ग्रन्थकार ने इन सूत्रों में धर्म और राजनीति को अलग-अलग समझने वाले आज के पाठकों के सम्मुख राजनीति को धर्म से अलग न होने देने वाला दृष्टिकोण रखा है। राष्ट्र कल्याण की दृष्टि से धर्म तथा राजनीति सम्बन्धी विचारों के परिमार्जन का पुस्तक में सफल प्रयास हुआ है। पुस्तक के परिशिष्ट में चाणक्य सूत्रों का ऐतिहासिक आधार, चाणक्य का मन्त्रित्व त्याग तथा आर्य चाणक्य का इतिहास सम्बन्धी विवेचन ने ग्रन्थ के महत्व को कई गुना बढ़ा दिया है। बहुत सुन्दर कागज पर छपी पुस्तक, प्लास्टिक लेमीनेटिड कवर।

चाणक्य नीति (भाषा टीका)

टीकाकार—पं० ज्वाला प्रसाद चतुर्वेदी

नीतिशास्त्र वेत्ता आचार्य चाणक्य को कौन नहीं जानता? कूटनीतिज्ञ चाणक्य की इस रचना को मूल संस्कृत श्लोकों और सरल हिन्दी अनुवाद सहित प्रस्तुत किया गया है।

श्री विष्णु सहस्रनाम भाषा टीका

भाषाकार : पं० ज्वाला प्रसाद चतुर्वेदी

महाभारत में दिए इस महान स्तोत्र की बड़ी महानता है। भगवान विष्णु के १०० नामों का बखान इस स्तोत्र में बड़े विचित्र ढंग से किया हुआ है। संस्कृत श्लोक व हिन्दी अनुवाद इस पुस्तक के अन्त में विष्णु जी के १००० नामों की गणना गिनती सहित कराई गई है।

सम्पूर्ण शिव पुराण

अनुवाद—पं० ज्वाला प्रसाद चतुर्वेदी

भगवान शंकर का प्रत्यक्ष रूप 'शिव पुराण' मनुष्य की चित्त शुद्धि का सर्वोत्तम साधन है। बड़े भाग्य तथा अनेक जन्मों के पुण्यों से ही बुद्धिमान मनुष्यों को इसके पढ़ने में प्रीति होती है। सौ राजसूय यज्ञों से प्राप्त होने वाला फल इस अकेले शिव पुराण के पढ़ने से मिल जाता है। अमृत पीने वाला तो केवल स्वयं अमर हो पाता है किन्तु शिव पुराण की कथा के अमृत को पीने वाला अपने सारे कुल को ही अमर कर देता है। मुक्ति चाहने वाले प्राणी को प्रतिदिन इस पुराण का पठन-पाठ करना चाहिए। कलयुग में मनुष्यों के हित के लिए ही शंकर जी ने ये अमृतरूपी पुराण कहा है।

भगवान के पांच विचित्र अवतारों की कथा

लेखक — स्वामी श्री अखंडानंद जी महाराज

पुस्तक रूप में प्रस्तुत श्री मत्स्यावतार कथा, कच्छपावतार कथा, वराहावतार कथा, वामनावतार कथा तथा नृसिंहावतार कथा में लेखक ने जन साधारण को यह रोचक कथाऐं तो उपलब्ध कराई ही हैं तथा ये भी बताया है कि भगवान की महिमा अनंत है। निर्गुण-निराकार, सगुण-साकार सब उन्हीं का स्वरूप है। बुद्धि जितना सोच सकती है, जितना आकलन कर सकती है और जितना बड़ा काल्पनिक मानचित्र बना सकती है उसके भी परे, बहुत परे भगवान विराजमान हैं। मन वहां नहीं पहुँच सकता, वाणी उनका वर्णन नहीं कर सकती। हमारे पास देखने और जानने के जितने साधन हैं उनके बल पर हम भगवान को नहीं पा सकते। वे स्वयं ही कृपा करके जिस पर अपनी महिमा प्रकट कर दें और अपने दर्शन तथा अनुभव का अधिकारी चुन लें, वही उन तक पहुँच सकता है।

नीति ग्रन्थों के [illegible]

संग्रहकर्त्ता — [illegible] कृष्ण मुज़तर

हिन्दू शास्त्रों और विभि[illegible] में वर्णित सामान्य जीवन और व्यवहार के लिये उपयोगी महापुरुषों का [illegible]। [illegible] आयु के पाठक के लिये [illegible] उपयोगी पुस्तक।

ज्ञान की राह दिखाने वाले
महापुरुषों के अनमोल वचन

संग्रह और सम्पादन — नंदलाल दशोरा

जितना ही हम अध्ययन करते हैं उतना ही हमें अज्ञान का आभास होता जाता है। पढ़ना तो सभी जानते हैं लेकिन क्या पढ़ना चाहिये ये पुस्तक आपको यह सोचने पर मजबूर करेगी कि आपको क्या पढ़ना चाहिए।